तृतीय अध्याय
विवेच्य उपन्यासों में चित्रित सामाजिक समस्याएँ

विवेच्य उपन्यासों में चित्रित सामाजिक समस्याएँ

प्रस्तावना

सुधार आंदोलन तथा सामाजिक संस्थाओं की एक सीमा होती है। आधुनिक कालीन समाज सुधारकों में पहले पहल स्वामी रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, अरविंद आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। राजा राममोहन राय ने ब्राह्मों समाज की स्थापना की। उनका उद्देश्य था, समाज की कमियों, रुढ़ियों, परंपराओं को समाप्त करना। महाराष्ट्र में महादेव रानडे तथा डॉ. भांडार के नेतृत्व में 'प्रार्थना' समाज की स्थापना हुई, जिनका उद्देश्य सामाजिक सुधार ही था। स्वामी दयानंद ने ईसाई धर्म के प्रचार की प्रतिक्रिया में आर्य समाज की स्थापना की, उनका व्यक्तिमत्व, सामाजिक क्षेत्रों में क्रांतिकारी था। स्वामीजी के दो कार्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं- राष्ट्रीयता का संचार और राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रचार। शिक्षा संस्थाओं के निर्माण द्वारा शिक्षा का प्रचार, नारी के प्रति आदर की भावना, निम्न जातियों के प्रति अस्पृश्यता की भावना का निवारण, पुरातन रूढ़ियों का परित्याग इन सब कार्यों के लिए भारतीय जनता इस समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानंद की सदा ऋणी रहेगी।

ऐनीबेजण्ट जैसी विदेशी नारी ने अपने आपको तथा अपने पूर्वजों को हिंदू माना और हिंदू धर्म को श्रेष्ठ माना। उन्होंने देश की राष्ट्रीयता को जागृत किया। इसने विज्ञान की अति बौद्धिकता का विरोध करके भारतीय अध्यात्मिकता का उत्थान किया।

स्वाधीनता की प्राप्ति के साथ ही एक नया राजनीतिक परिवेश उत्पन्न हुआ, जिसने व्यक्ति और समाज के लिए एक विशिष्ट परिस्थिति का निर्माण किया। सन् 1947 के बाद स्वतंत्रता प्राप्ति तो हुई पर धीरे-धीरे स्वार्थी राजनीतिज्ञों का जो स्वरूप सामने आया, उसने जनसाधारण को सोचने को बाध्यकर दिया कि क्या इसीलिए हमें आज़ादी मिली ? चारों ओर नैतिक अवमूल्यन, अनास्था, स्वार्थ आदि का बोलबाला होने लगा। जातिगत भेदभाव मिटने की जगह बढ़ने लगे। धर्मांधता के नाम पर सांप्रदायिक दंगे बढ़ने लगे। धर्म के नाम पर जो अनाचार एवं लूट हो रही है, उसने लेखक के जनमानस को गहराई से प्रभावित किया।

14049
A

दूसरी ओर देश का सारा अपराध तथा कथित अफसरों की फाइलों में बंद होकर रह गया। इसी कारण देश में अराजकता, आलस, चोरबाजारी आदि का जाल फैलने लगा। एक सामान्य व्यक्ति की भूमिका देश में महत्त्वहीन हो गई। समाज बीसवीं शताब्दी के अपेक्षित प्रभावों के कारण अपने पुराने मूल्यों से टूटकर बिखरता रहा। संयुक्त परिवारों का स्थान एकल परिवार ने लिया। पति-पत्नी के दांपत्य संबंधों को पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता पड़ी। एक और जनसंख्या का भीषण विस्फोट हुआ। आज आदमी का जीवन दोहरी मार से टूटकर बिखरता गया। अर्थतंत्र और समाजतंत्र के बीच झूलते विवश मानव की स्थिति बड़ी ही दयनीय हो उठी। राही जी ने युग की राजनैतिक सामाजिक पृष्ठभूमि में जनसाधारण की इस स्थिति को गहराई से देखा ही नहीं तो उसे गहराई से झेला भी।

शिक्षित युवापीढ़ी आज बुरी तरह भटक गई है। उसके सामने कोई आदर्श नहीं है। शिक्षा के व्यापक प्रसार ने समाज में स्थित वैवाहिक जीवन की रूढ़ मान्यताएँ और परंपरागत बंधन शिथिल कर दिए हैं। अब अन्य जातीय-विवाह, प्रेम-विवाह तथा विधवा-विवाह भी होने लगे हैं। शिक्षा की सुविधा ने नारी का नया रूप प्रस्तुत किया है।

डॉ. आशा बागड़ी ठीक ही लिखती हैं- ''स्वतंत्र भारत में स्त्रियों के उपयुक्त बहुत से ऐसे पेशे हैं, जिनमें स्त्रियाँ आसानी से अर्थोपार्जन कर सकती है, देश में शांति होने से स्त्रियों को कोई भय नहीं। अब उनको अपनी रक्षणार्थ किसी पुरुष का आलंबन उतना आवश्यक नहीं जितना मध्यकाल में था।''[1] आज़ादी के बाद स्त्री-पुरुष संबंधों के नए दायरे स्पष्ट हुए हैं। पति-पत्नी के बीच स्वच्छंदता की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है।

स्वातंत्र्योत्तर समाज जीवन के रहन-सहन, आचार-विचार और व्यवहारों में काफी परिवर्तन आया है। गाँव के शिक्षित युवक शहर के मायावी आकर्षणों से आकर्षित होकर नौकरी की तलाश में महानगरों की ओर भाग रहे हैं। लेकिन नौकरी न मिलने के कारण या तनख्वाह कम मिलने के कारण अत्याधिक व्यवसाय महानगरीय जीवन जीना उसके लिए बड़ा कठिन होता है। महँगाई, बेकारी, भौतिक सुखों की लालसा उसे तनावपूर्ण और घुटनभरी जिंदगी जीने को विवश के बाद मनुष्य के जीवन को यांत्रिक बना दिया। व्यक्ति अपने ही भीतर बिखराव महसूस कर रहा है।

---

1. डॉ. आशा बागड़ी - प्रेमचंद, परवर्ती उपन्यास-साहित्य में पारिवारिक जीवन, पृ.80

उसका मन, उसकी चेतना, उसकी आकांक्षा में उसके सपने, उसका 'स्व' और उसका सब कुछ बिखरता जा रहा है। आज़ादी के पूर्व व्यक्ति, समूह, समाज और संपूर्ण देश ने जो सपने देखे थे, वे टूट गए और बनना चाहा था बिखर गया। स्वातंत्र्योत्तर समाज जीवन में बिखराव-ही-बिखराव दिखाई देता है।

राही मासूम रजा ने अपने बहचर्चित आंचलिक उपन्यास 'आधा गाँव' को गाजीपुर के गंगौली नामक वास्तविक गाँव की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत किया है। यह उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले का प्रसिद्ध और बड़ा गाँव है, जिसमें हिंदुओं और मुसलमानों की अनेक जातियाँ निवास करती हैं। राही मासूम रजा ने इस उपन्यास में केवल शीआ मुसलमानों के जीवन को चित्रित करने का प्रयास किया है। अन्य जातियों का और संप्रदायों का उल्लेख नाम मात्र दिखाई देता है। इसीलिए लेखक ने अपने उपन्यास को 'आधा गाँव' कहना उचित समझा। इस रचना द्वारा ''हिंदी उपन्यास जगत में शायद पहली बार मुस्लिम जन जीवन की भीतरी बाहरी सच्चाइयाँ अपने विविध रंगों में अच्छी बुरी परछाइयों को लेकर प्रस्तुत हुई हैं, जिनसे निश्चय ही भारतीय जिंदगी का एक और कोना उजागर हुआ है।''[1]

राही ने इस उपन्यास में 1937 ई. से 1952 ई. तक के पंद्रह वर्षों की अवधि में होनेवाली घटनाओं और उनके गंगौली के शीया मुसलमानों पर होनेवाले प्रभावों को बाँधने का प्रयास किया है। भारत के इस अविकसित गाँव गंगौली में रहनेवाले शीआ मुसलमानों को भी अन्य भारतवासियों के समाज अनेक सामाजिक समस्याओं के सामना करना पड़ता है। राही जी ने इन समस्याओं का वास्तविक एवं मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है।

3.1 सांप्रदायिकता की समस्या -

भारत एक ऐसा देश है जिसमें अनेकता में एकता के दर्शन होते हैं। भारत का विशाल जन-समुदाय परस्पर सद्भाव और एक राष्ट्रीयता की अनुभूति से संगठित था। जातिवाद, अस्पृश्यतावाद एवं अल्पसंख्याक समूह भाषावाद आदि तत्व भारत में दीर्घकाल से विद्यमान हैं। लेकिन आधुनिक युग में विभिन्न राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनों की अति तीव्र हो जाने के कारण यह दबे हुए तत्व विकसित होकर विकराल रूप में अवतरित हो गए।

---

1. ज्ञानचंद्र गुप्त - आँचलिक उपन्यास, संवेदना और शिल्प, पृ. 29

इसी समय भारत में सांप्रदायिकता की समस्या ने विकराल रूप धारण कर लिया। लेकिन इसका सूत्रपात उन्नीसवीं शताब्दी से ही हो गया था। जब 1820 में सर्व प्रथम अरब में वहाबी आंदोलन का सूत्रपात हुआ, भारत में सईद अहमद बरेलवी ने मक्का से लौटकर जिहाद आंदोलन प्रारंभ कर दिया। सन् 1877 में सर सैयद अहमद खाँ के अलीगढ़ आंदोलन से इस वैमनस्यता का रूप व्यापक हो गया। सर सैयद ने सन् 1887 में मुस्लिम सम्मेलन की स्थापना और देशभक्त मुसलमानों के एसोसियेशन की स्थापना की। इन प्रयासों से अंग्रेज काफी उत्साहित हुए और उन्होंने हिंदू-मुसलमान विघटन का राजनैतिक लाभ उठाने का प्रयास किया।

अंग्रेज शासक जहाँ एक ओर "सामंती युग के अवशेष जमींदारों, रायबहादुरों, नवाब जादों, के प्रयत्नों से राजनीतिक जागृति को दबाने का प्रयत्न कर रहे थे वहाँ दूसरी ओर वे कभी एक वर्ग का पथ ले और कभी दूसरे को संरक्षण दे. हिंदू-मुस्लिम दंगे एवं ब्राह्मण-अब्राह्मण के प्रश्न के रूप में, जातीय के प्रश्न के रूप में जातीय दंगों की भूमि तैयार कर रहे थे।"[1] उन्होंने फिर भी मुसलमानों को प्रेरित किया कि सांप्रदायिकता के आधार पर प्रतिनिधित्व की माँग करे। सन् 1906 में मुस्लिम लीग की स्थापना हुई, सन् 1909 में मार्ले-मिन्टों सुधार अधिनियम पारित हुआ। इस अधिनियम से देश में प्रथमबार सांप्रदायिक चुनाव प्रणाली का सूत्रपात हुआ। मुसलमानों को अपने अलग प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया। उनके लिए अलग विश्वविद्यालय, वाणिज्य संघ और नगरपालिकाओं में स्थान सुरक्षित रखे गए।

सन् 1921 में देश में हिंदू-मुसलमान झगड़े हुए। पंजाब इस दृष्टि से काफी ग्रस्त था। सन् 1937 में हंदू-मुस्लिम संघर्षों की संख्या देश में अधिक हो गई, जिसका प्रमुख कारण वैधानिक समस्याओं के प्रति मतभेदों में तीव्रता थी। सन् 1940 के लाहोर अधिवेशन में मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान की माँग को आगे बढ़ाया।

सन् 1946 में भारत में चुनाव हुए। इस चुनाव में मुस्लिम लीग को काफी सफलता प्राप्त हुई। इस देश में अनेक स्थानों पर सांप्रदायिक दंगे हो गए। प्रथम काँग्रेस ने पाकिस्तान की माँग का विरोध किया। परंतु अंत में परिस्थिति से विवश होकर उसमें देश के बँटवारे की माँग को स्वीकार कर लिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय इस सांप्रदायिक समस्या ने और भी विकराल रूप

---

1. डॉ. शांतिस्वरूप गुप्ता - हिंदी तथा मराठी उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन, पृ. 123, 124

धारण कर लिया और देश को इस कारण से अत्यंत विशाल रूप में जन-धन की क्षति उठानी पड़ी। सांप्रदायिकता के उक्त उत्तरदायी कारकों को विकसित करने में मुसलमानों के संगठन और स्वतंत्र राष्ट्र की माँग आदि का तो उत्तरदायी स्थान है।

राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' में स्वतंत्रता के समय हिंदू-मुसलमानों के बीच होनेवाले देशव्यापी सांप्रदायिक दंगों का प्रभाव गंगौली को दिखाते हुए इस बात को स्पष्ट किया है कि सभी मुसलमानों और हिंदुओं की प्रवृत्ति सदैव आपस में झगड़ते रहने की नहीं है। सांप्रदायिक दंगे हमेशा कुछ लोगों के उकसाने के कारण होते हैं। साधारण लोग दूसरों की बातों से उत्तेजित होकर दूसरे संप्रदायों के अबोध व्यक्तियों की हत्या करने लगते हैं। इसी विचार धारा को स्पष्ट करते हुए राही जी कहते हैं कि यद्यपि बारिखपुर के विद्वान स्वामीजी के भाषण से उत्तेजित होकर अपने पड़ोसी मुसलमानों पर आक्रमण करने के लिए तैयार हो गए, परंतु "इन सीधे-सादे किसानों की समझ में यह बात नहीं आयी कि अगर बारिखपुर के बफाती, अलावलपुर के धरऊ हहरही के घसीटा को, यानी अपने मुसलमानों को सजा क्यों दी जाए ? जिन मुसलमान बच्चियों ने छुटपन में उनकी गोद में पेशाब किया है उनके साथ क्यों और कैसे की जाए ? उनकी समझ में यह बात भी नहीं आ रही थी कि जिन मुसलमानों के साथ वे सदियों से रहते चले आ रहे हैं, उनके मकानों में क्यों और कैसे आग लगा दी जाए ? उन मुसलमानों को कैसे मारे जो नमाज पढ़कर मस्जिद से निकलते हैं, तो हिंदू मुसलमान सभी बच्चों को फूँकते हैं। किसानों की समझ में यह आता था कि झगड़े की फसल काट ली जाए। जमीन के मामले में एकाध कत्ल-खून हो तो कोई बात नहीं लेकिन यूँ ही केवल इस जुर्म पर किसी को कत्ल कर देना या किसी का घर फूँक देना, कि कोई मुसलमान, उनकी समझ में आ ही नहीं सकता था।"[1]

इस प्रकार लेखक यह स्पष्ट कर देते हैं कि जब साधारण जनता के बीच यह जागृति आ जाएगी कि अनेक सांप्रदायिक झगड़ों के मूल में राजनैतिक स्वार्थ ही निहित रहता है, तब सांप्रदायिक दंगों की समस्या स्वयं सुलझ जाएगी।

कथाकार अपने उपन्यास 'टोपी शुक्ला' में यह स्पष्ट करते हैं कि पाकिस्तान का निर्माण भारतीय इतिहास की केवल एक राजनैतिक घटना है। इसी कारण भारत के हिंदू-मुस्लिमों

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 175

में वैमनस्य उत्पन्न होने की कोई आवश्यकता नहीं है। परंतु पाकिस्तान निर्माण की प्रतिक्रिया तो आशा के विपरीत हुई, इसका वर्णन करते हुए लेखक कहते हैं कि जब रफ्फन डिग्री कॉलेज में इतिहास का अध्यापक नियुक्त हुआ और बड़ी तैयारी के साथ वह वर्ग को पढ़ाने के लिए जाता है। क्लास में वो देखता है कि सब लड़के लाशों की तरह बैठे थे। ये देखकर रफ्फन सोचता है, इनको क्या पढ़ाया जाए ? इन लड़कों को कैसे बतलाया जाए कि इतिहास अलग-अलग बरसों या क्षणों का नाम नहीं, बल्कि समय की आम कथा है।

राही यह बात भी स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हिंदुओं को यहाँ के मूल निवासी समझकर मुसलमानों को बाहर से आए हुए समझकर उनसे पृथकता का व्यवहार करना ठीक नहीं है। यदि किसी हिंदू और मुसलमान के बीच में कभी कोई शत्रुता होती है, तो उसका कारण वैयक्तिक हानि लाभ होता है। केवल धर्म के आधार पर वे एक-दूसरे के शत्रु नहीं होते। टोपी शुक्ला के पिता डॉ. पंडित भृंगुनाथ नारायण एक डॉ. शेख शरफउद्दीन के बीच के झगड़े का वर्णन करते हुए इसी विचार को व्यक्त करते हैं।

लेखक ने अनेक स्थानों पर अपनी यह धारणा स्पष्ट कर दी है कि वास्तव में भारत में रहनेवाले सभी हिंदू और मुसलमान भाई-भाई हैं। इस उदाहरण के रूप में वे टोपी और शुक्ला की अटूट मित्रता को स्पष्ट करते हैं।

लेखक हिंदू और मुसलमानों ने एक-दूसरे की रक्षा के लिए किए गए बलिदानों का वर्णन करते हुए, सिद्ध करते हुए कहते हैं कि कई हिंदुओं ने मुसलमानों की रक्षा करते हुए अपने प्राण दिए हैं। उदाहरणार्थ रफ्फन की पत्नी सकीना को महेश ने अपने घर में शरण देकर उसकी रक्षा करते हुए महेश बलवाइयों के हाथों मारा गया। महेश का भाई रमेश भी सकीना को सगी बहन की तरह प्रेम करता है। रमेश युद्ध में मारा जाता है, तो सकीना बहुत दुःखी होती है। फिर भी उसके मन में हिुदओं के प्रति घृणा ही थी, क्योंकि उसके पिता की हत्या हिंदुओं ने की थी। इस प्रकार राही जी अनेक उदाहरणों के साथ सांप्रदायिक समस्या को यथार्थता से प्रस्तुत किया है।

'हिम्मत जौनपुरी' में भी सांप्रदायिक समस्या दिखाई देती है, इतिहास तो पुराना नहीं है। सबको "यह मालूम हो कि इसी हिंदुस्तान में यह भी होता था कि एक ही आदमी मस्जिद भी बनवाता था और 'मसनवी दरबयाने-इश्के-रामो-सीता' भी लिखता था। राम और मस्जिद का

बैर बहुत पुराना नहीं है। यदि इनमें झगड़ा होता तो 'रसखान' ने मक्के के गड़रिए की जगह ब्रज के गड़रिए को अपने काव्य की आत्मा क्यों बनाया होता और सूफियों ने कृष्ण की काली कमली अपने मौंहम्मद को उठाकर उन्हें काली कमलीवाला क्यों कहा होता। मौहम्मद की कमली तो स्याह और सफेद धारियोंवाली थी- जमइयत्तुल-ओलमाये (हिंद) के झंड़े की तरह। और इसीलिए तो मैं हैरान हूँ कि यहाँ के मुसलमान, कमलीवाले झँड़े को छोड़कर हरे चाँद-तारेवाले ग़ैर-इस्लामी झँड़े के नीचे क्यों इकठ्ठा हो गए ?''[1]

✓ पाकिस्तान का निर्माण तो एक राजनैतिक कार्य था। उसके फलस्वरूप भारत में मुसलमानों और हिंदुओं के बीच नफ़रत और भय की भावना फैल गई और दोनों में हमेशा झगड़े होते रहे। इसी का मूल आधार राजनेताओं ने ले लिया, अपना फायदा उठा लिया हुआ दिखाई देता है।

सांप्रदायिक दंगों के बीच राजनैतिक स्वार्थ ही निहित रहता है, इन्हीं विचारों को 'कटरा बी आर्जू' उपन्यास में प्रस्तुत किया है।

प्रेमानारायण तथा आशाराम के बीच होनेवाले वाद-विवाद का वर्णन करते हुए राही जी लिखते हैं कि ''यह कहता था, काँग्रेसी अमरीका के हाथ बिके हुए हैं। वह कहती थी, पाकिस्तान को अमरीका उकसा रहा है और चीन उसकी हिंदुस्तान दुश्मनी को हवा दे रहा है। वह पूछता था कि पाकिस्तान को हवा खाने का शौक नहीं है, पर जो सरकार बहुमती सरकार नहीं होगी, वह यह हथकंड़े नहीं आज़माएगी तो कितने दिन टिकेगी ? यहाँ हिंदू-मुस्लिम, ब्राह्मण-अछूत, महाराष्ट्र-तामिलनाडू में झगड़े होते रहते हैं। वहाँ शीआ-सुन्नी, मुस्लिम-कादयानी, बंगाली-पंजाबी बलवे होते हैं कि दोनों ही सरकारें जनता की सरकारें नहीं हैं।''[2]

डॉ. राही जी मुसलमानों के हाथों हिंदुओं के साथ पक्षपात न करने का भी उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। पहलवान आशाराम से कहता है- ''हमसे अभई ई कल के लौंड़े पूछते रहे कि हम अपनी दुकान में गामा पहलवान की तस्वीर काहे को टाँगे हैं। हम कहा, बेटा ! हम साइदन छः नहीं तो सात बरस के रहे होंगे तब जब गामा पहलवान हियाँ एलाहाबाद में दंगल लड़े आए। उस्ताद

---

1. राही मासूम रजा - हिम्मत जौनपुरी, पृ. 8
2. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 97

हम्में ले जाके उनके पैरन में डाल दिया और कहा, इ बच्चे को दुआ दो पहलवान ! गामा अखाड़े की एक मुठठी मट्टी लैके हमरे बदन में मल दिहिन और बोले, बेटा, ऐ मट्टी दी लाज रखना। जब ऊ ना कहिन कि हम हिंदू लौंड़े को अखाड़े मट्टी ना लगाएँ गे तो हम कैयसे कहें कि ऊ मुसलमान रहे, एह मारे हम अपनी दुकान में उनकी तसवीर ना टाँगेंगे ? हिंदु-मुसलमान होना और चीज़ है। पहलवान होना और चीज़ है।''[1]

उपर्युक्त उदाहरणों के द्वारा लेखक ने यह स्पष्ट किया है कि सांप्रदायिक समस्या का समाधान जनता के हाथों में है, अर्थात जनता नेताओं के इशारों पर आपस में झगड़ना बंद करे तो यह समस्या सुलझ सकती है।

3.2 अनमेल विवाह की समस्या -

भारतीय समाज में अनमेल विवाह भयंकर सामाजिक दोष है। अनमेल विवाह के अनेक कारण हैं। सबसे प्रमुख कारण है आर्थिक संकट। जब माँ-बाप अपनी आजीविका में से हजारों रुपए दहेज में देने के लिए असमर्थ होते हैं, तो वह विवश होकर किसी ऐसे व्यक्ति से अपनी लड़की का विवाह करने के लिए तैयार हो जाते हैं, जो धन न माँगे। अनमेल विवाह तब भी होता है, जबकि विवाह-संबंध स्थापित करनेवाले माँ-बाप न हो। अनमेल विवाह का एक और भी कारण हो सकता है, लड़के द्वारा झूठ बोलना और लड़की के भोले-भाले माँ-बाप द्वारा उसे सच मान लेना।

अनमेल विवाह की समस्या सामंतवादी और पूँजीवादी समाज व्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण दोष है, जिसमें पुरुष नारी को अपनी वैयक्तिक संपत्ति मात्र समझता है। ''भारत में अनमेल विवाह की समस्या के विशेष गहन बनने का कारण यह भी था कि नारी की ओर उपेक्षा और घृणा की दृष्टि से देखने में अनेक धार्मिक संप्रदायों ने भी योग दिया।''[2]

प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में अनमेल विवाह की समस्या को विविध रूपों में प्रस्तुत किया है। 'सेवा सदन' में दहेज का प्रबंध कर सकने की असमर्थता का परिणाम सुमन के अनमेल विवाह में हो जाता है। राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' में मौलवी बेदार और बछनिया की प्रेम कथा

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 40
2. डॉ. चंद्रकांत महादेव बांदिवडेकर - हिंदी और मराठी के सामाजिक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन, पृ. 193

के द्वारा अनमेल विवाह की समस्या की ओर संकेत किया है। मौलवी बेदार झंगटिया चमारिन से उत्पन्न सुलेमान चाचा की जवान पुत्री बछुनिया को एक बार देखकर उस पर कुर्बान हो जाते हैं। बेदार मियाँ मौलवी हैं, पच्चास वर्ष तक किसी औरत के संपर्क में नहीं आए और कुँआरी जिंदगी तन्हाई में बिता दी। अब बुढ़ापे में उन पर इश्क सवार होता है। वह भी एक चमारिन हरामी लड़की से। वे बछनिया से मेहर के साथ विवाह करने के लिए तैयार होते हैं। वे इस बात कि ओर ध्यान नहीं देते की बूछनिया अभी 14 या 15 वर्ष की है और मौलवी बुढ़ापे की दहलीज में है। उत्तर-पट्टी के शीया, विशेषकर स्त्रियाँ बूढ़े मौलवी को ताने मारती हैं। परंतु बेदार साहब अपना इरादा नहीं बदलते।

जब हुसैन अली मियाँ की बहन कम्मुल ने इस विवाह पर आपत्ति की तब मौलवी बेदार उसे साफ कहते हैं, "बेटा, यह घर तुम्हारा है, जब चाहो आओ और जब तक चाहो रहो। लेकिन तुम्हें अपने बुजुर्गों के मामलात में दखल नहीं देना चाहिए। मैंने तो कभी तुम्हारे ससुर को इस बात पर नहीं टोका कि उन्होंने गाजीपुर में एक रण्डी क्यों रख छोड़ी है। और न ही मैंने उनसे यह पूछा कि अमतुल से उनके क्या ताल्लुकात हैं, मैं तो फिर निकाह करने जा रहा हूँ।"[1]

जब सब कुछ पक्का हो गया और मौलवी का निकाह होनेवाला था तब गाँवभर में खबर फैलती है कि बछनिया सरिफवा से फंसी थी। वह गर्भवती हो गई थी, इसलिए एक रात वो सारिकवा के साथ कलकत्ता भाग गई। बेदार सीर पीटकर रह गए। न बछनिया ही मिली और न उनकी इज्जत ही बची। "इस प्रकार बेइज्जत होकर शीआओं के धार्मिक नेता के रूप में सारे समाज का कलंक लेकर मौलवी बेदार सबके सामने हास्यास्पद बन जाते हैं।"[2]

राही जी ने अपने 'कटरा बी आर्जू' में भी इस समस्या का चित्रण किया है। इस उपन्यास में भी महनाज और जोखन के विवाह का वर्णन करके पाठकों का ध्यान इस समस्या की ओर आकृष्ठ किया है। दरिद्रता के कारण महनाज का विवाह अपने पिता समान लगनेवाले व्यक्ति से होता है। देशराज जब शम्सू मियाँ से पूछता है कि लड़का क्या करता है तब वे उत्तर देते हैं-

"नौकरी खोजने का काम कर रहा है आजकल। हेड कानिसटिबली से रिटायर भया है दू बरस पहले।"

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 125
2. डॉ. इंदु प्रकाश पांडेय - हिंदी आंचलिक उपन्यासों में जीवन-सत्य, पृ. 261

"आप तो सम्धी की बात करे लगे। हम लड़के को पूछते रहे।"

"हम लड़कवे की बात कर रहें बेटा।"[1]

शादी के समाचार की इतवारीबाबा से चर्चा करते हुए पहलवान ने कहा, "हमरा तो खून खौल रहा सरे साम से।"

"केह बात पर ?" देश ने पूछा।

"जोखन को सर्म ना आयी महनाज के वास्ते अपना पचास देते।"

"ए में खून खौलाये की का बात है ?" इतवारी ने कहा।

"आजकल हर महल्ले में एक आध ठो जोखन और महनाज हैं। जिंदगियेन मैयली हो गई है पहलवान।"[2]

इस प्रकार लेखक ने यहाँ यह स्पष्ट कर दिया है कि इस समस्या का मूल कारण दरिद्रता है। इस समस्या का समाधान दरिद्रता के निवारण से ही निहीत है, यही बात लेखक यहाँ स्पष्ट करते हैं।

3.3 प्रेमविवाह की समस्या -

प्रेमविवाह की समस्या आज आधुनिक काल की प्रमुख समस्या है। इस समस्या का आधुनिक साहित्य में विविध रूपों में चित्रण किया गया है। अकसर ऐतिहासिक और पौराणिक कथाओं में प्रेम की परिणति विवाह में होती दिखाई देती है। परंतु आज जब-कि साहित्य यथार्थ के धरातल पर खरा है और उसमें सामान्य व्यक्ति के जीवन की समस्याओं का चित्रण होने लगा है, प्रेम की परिणत विवाह में बेहिचक दिखाना लेखकों और पाठकों के लिए रुचिकर मालूम नहीं होता।

आज के युग में नारी पुरुष के साथ-साथ शिक्षा संस्थाओं तथा दफ्तरों में काम करने लगी है इसका परिणाम स्त्री-पुरुषों में आकर्षण होने लगा है। धर्म, जाति तथा धन का अभिमान आदि के संबंध में भारतीय समाज में अभी रूढ़िवादिता बहुत बड़े पैमाने पर मौजूद है।

प्रेम के विवाह में परिणत होने में बाधा उत्पन्न होती है। पारिवारिक विरोध इसमें ज्यादा रूकावट पैदा करता है। राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' में मेजर तन्नू के प्रेम एवं विवाह का

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 47
2. वही, पृ. 75

वर्णन करते भारत में प्रेम विवाह की समस्या के बारे में अपने विचार प्रकट किए हैं। तन्नू अपनी चचेरी बहन सईदा से प्यार करता है और युद्ध के समय उस से दूर रहकर भी वह उसे भूल नहीं पाता।

युद्ध से लौट आने पर अपने संकोची स्वभाव के कारण वह अपने प्रेम को सईदा पर प्रकट नहीं कर पाता। सईदा के दिल में भी उसके लिए प्यार है, परंतु दोनों में से किसी में भी मन के भावों को व्यक्त करने का साहस नहीं। कथाकार परिस्थिति को स्पष्ट करने के लिए कहता है- "वह भला यह कैसे लिखता कि सईदा, मैं तुमसे मुहब्बत करता हूँ, क्योंकि सईदा तड़ से कह सकती है कि यह तो कोई खास बात न हुई, क्योंकि हर भाई अपनी बहन से मुहब्बत करता है।"[1]

यहाँ दूसरी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। तन्नू के बाप की मृत्यु तन्नू की अनुपस्थिति में हो गई थी। मरते समय तन्नू के बाप ने यह इच्छा प्रकट की थी कि तन्नू का विवाह फुस्सू मियाँ की लड़की सलमा से हो। फिर कुछ दिनों तन्नू सलमा के साथ विवाह करने के लिए राजी हो जाता है और उसका विवाह सलमा के साथ हो जाता है।

उपर्युक्त घटना के द्वारा राही जी ने उसी भारतीय आदर्श का समर्थन किया है कि वर-वधू के विवाह में विवाहपूर्व प्रेम का कोई महत्त्व नहीं। माता-पिता की इच्छा ही महत्त्वपूर्ण मानी जाती है, क्योंकि वे अपने अनुभव के आधार पर अपने बच्चों के विवाह के बारे में जो फैसला करते हैं, वह ही उत्तम होता है, चाहे वो फैसला बच्चों को आरंभ नापसंद ही क्यों न हो।

लेखक ने 'दिल एक सादा कागज' में भी रफ्फन और जन्नत के बीच प्रेम विवाह तथा बाद में उनके जीवन की कठिनाइयों का चित्रण किया है। रफ्फन जब अर्लागढ़ विश्वविद्यालय में पढ़ रहा था तब एक मध्यवर्गीय परिवार की लड़की उससे प्यार करती है। वह सोचती है रफ्फन आज एक प्रसिद्ध कवि है, आगे चलकर उच्च कोटि का साहित्यकार हो जाएगा। लेकिन पढ़ाई के बाद वह एक स्कूल में अध्यापक बन जाता है। इसी बीच दोनों का विवाह हो जाता है। विवाह के बाद जन्नत को इस बात का अनुभव होता है कि "लेखक से तो उसने प्यार किया था, विवाह तै किया था उसने गवर्मेंट सैकेंडरी स्कूल के हिस्टरी टीचर से जो हर महीने तनख्वाह पाता था।"[2]

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 265
2. राही मासूम रजा - दिल एक सादा कागज, पृ. 67

दोनों के प्यार और विवाह का वर्णन करते हुए राही जी कहते हैं कि ''मध्य वर्ग की लड़कियों को ख्वाब देखने की बुरी लत होती है। उसने भी परंपरा अनुसार बागी आजमी का ख्वाब देखना शुरू कर दिया। लेकिन चूँकि वह एक मध्यम वर्ग की लड़की थी इसीलिए उसके ख्वाब शादी से शुरू होकर सुहाग रात तक पहुँचते तो शर्मा कर अपनी आँखें बंद कर लेती।

शादी के कुछ दिनों बाद उसके पास केवल यह ख्वाब रह गए। रोमांस की पन्ती थोड़े ही दिनों में उतर गई। महंगाई के साथ जीवन की मिठास कम होने लगी। यह बात नहीं थी कि दोनों को एक-दूसरे से प्यार न रह गया हो या प्यार कम हो गया हो। पर जरूरतें तो जरूरतें होती हैं और यदि पति जरूरतें भी पूरी न कर सके तो उसके होने से क्या फायदा।''[1]

राही जी जीवन की वास्तविक्ता का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि ''प्यार का ग्राफ कभी जिंदगी की दूसरी चीजों की कीमतों के ग्राफ से जुड़ा होता है। प्यार का एक साफ-सुथरा घर नहीं बन सकता। चाय बनकर प्यालियों में नहीं उँड़ेल सकता। इस्त्री बनकर कपड़े की सलवटें नहीं दूर कर सकता। सिनेमा के दो टिकट नहीं बन सकता। 103, सट्टी मस्जिद में सवेरा बनकर नहीं आ सकता। वह केवल यह कर सकता है कि ख्वाहिशों के घावों में ऊँगली नचा-नचाकर याद दिलाता रहे कि आदमी घायल है। प्यार कोई 'फिकसो' नहीं है कि तड़ से सपनों के टुकड़े इकट्ठा किए और जोड़ लिए।''[2] जब प्यार का नशा कम होता है और पति-पत्नी के बीच झगड़ा शुरू होता है तब जन्नत अपने पति से कहती है- ''मैं ताजमहल की फरमाइश तो करती नहीं। पर एक साफ-सुथरा घर तो माँग ही सकती हूँ।''[3]

इस प्रकार पारिवारिक झगड़ों का चित्रण करते हुए राही जी यह स्पष्ट करते हैं कि केवल प्यार ही जीवन में सब कुछ नहीं होता। प्रेम-विवाह भारतीय संस्कारों में पले परिवारों के लिए हमेशा आदर्श एवं सुखमय जीवन नहीं दे सकता।

---

1. राही मासूम रजा - दिल एक सादा कागज, पृ. 68
2. वही, पृ. 91
3. वही, पृ. 92

3.4 अवैध संतान की समस्या -

विवाह-बाह्य यौन संबंधों के फलस्वरूप होनेवाली संतान को अवैध संतान कही जाती है। इस अवैध संतान की उत्पत्ति विवाह संस्था और परिवार संस्था पर गहरी चोट ही है। समाज ऐसी संतान की ओर कठोर दृष्टि से देखता है।

विधवा नारी की संतान, कुमारी माता की संतान, वेश्या या वेश्या कन्या से उत्पन्न संतान अवैध संतान समझी जाती है। अवैध संतान की शिक्षा, दीक्षा और विवाह में अनेक जटिल समस्याएँ पैदा होती हैं। व्यक्तिवादी लेखक समाज के अन्याय को देखकर विद्रोह करता है, तो समाजोन्मुख लेखक अवैध संतान की ओर मानवतावादी दृष्टिकोन से देखता है।

हिंदी उपन्यासों में विधवा या परित्यक्ता नारी से उत्पन्न संतान का चित्रण पाया जाता है। नंददुलारे वाजपेयी 'कंकाल' के प्रयोजन को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं- ''कामना के तीव्र प्रभाव में हिंदू-मुस्लिम-ईसाई जातीयता बहीना रही हैं। धर्म की सभी सामाजिक प्रक्रियाएँ मटियामेट हो रही हैं। इतिहास के आलोक में कुलीनता का कुहासा साफ हुआ जा रहा है।''[1] राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' में कमालुद्दीन के चरित्रचित्रण द्वारा अवैध संतान की समस्याओं की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है। कमालुद्दीन जवाद मियाँ की रखैल रहमान बो का पुत्र है। कमालुद्दीन को हमेशा अपनी सामाजिक स्थिति के संबंध में सोचकर दुख होता है। लेखक इस संबंध में कहते हैं कि 'कमालुद्दीन वल्द सैयद जवाद हुसैन जैदी और रहमान बो! क्या शजरा हैं! मगर यह मत वह जानता था कि अपने पैदा होने पर उसका कोई इख्तियार नहीं था, इसलिए उसके दिल में अपनी माँ यानी रहमान की बीबी और जवाद मियाँ की रखैल के लिए भी कोई इज्जत नहीं थी।''[2]

कमालुद्दीन की मानसिक अवस्था का वर्णन करते हुए राही कहते हैं कि उसके बाप की खरी हड्डी उसे हलाली नहीं बना सकती थी। इसलिए वह गाँव के उन तमाम लोगों से जलता था जो हलाली थे। अपनी माँ के निरादरपूर्ण जीवन का भी उसको बहुत दुख होता था। इसी ओर संकेत करते हुए लेखक कहते हैं कि ''अलीगढ़ से पाकिस्तान का प्रचार करने आए हुए एक वक्ता

---

1. नंददुलारे वाजपेयी - जयशंकर प्रसाद, पृ. 37
2. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 247

जब कमालुद्दीन से पूछते हैं कि क्या आप के वालिद और बलिदा भी वोटर हैं। 'यह सुनकर कम्मो को नशा आ गया। उसने एक बार अपनी माँ के लिए वालेदा सुना था वरना वह तो न माँ थी, न बीबी। वह तो सिर्फ रहमान बो थी।' ''[1]

ऐसी संतानों का कठिन समय तब आता है जब उनके विवाह का समय आता है। समाज में ये लोग आदर पात्र नहीं होते। कमालुद्दीन डाक्टरी की विद्या प्राप्त है फिर भी वह अब्बू मियाँ की बेटी सईदा से शादी नहीं कर सकता, यद्यपि वह उससे बहुत प्रेम करता है क्योंकि इनके विवाह को समाज की मान्यता नहीं है। कारण ''कहाँ अब्बू मियाँ की बेटी सईदा और कहाँ जवाद मियाँ का हरामी बेटा कम्मो।''[2] इस प्रकार राही जी इन व्यक्तियों की दशा पर प्रकाश डालकर सहानुभूति प्रकट करते हैं।

3.5 अवैध मातृत्व की समस्या -

भारतीय समाज में नर-नारी संबंध को विवाह संस्था की पवित्रता का आधार दिया गया है। नारी-पुरुषों के शारीरिक संबंधों को भारत में केवल नैसर्गिक मानकर नहीं देखा जा सकता।

विवाह संस्था उसे सामाजिक रूप देती है और यही कारण है कि जब कोई नारी सामाजिकता की अवहेलना करके मातृत्व प्राप्त करती है तब समाज के सामने वह एक समस्या के रूप में उपस्थित होती है। विवाह के पूर्व मातृत्व की प्राप्ति अधार्मिक एवं असामाजिक समझी जाती है। ऐसी अवस्था में नारी को कठोर दंड भोगना पड़ता है। नारी का यह दुर्भाग्य ही है, क्योंकि नारी ही दंड़ का पात्र बनती है और पुरुष इसमें से आसानी से छूट जाता है। यह पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था का दोष है।

राही जी ने 'आधा गाँव' में बछनिया के द्वारा अवैध मातृत्व की समस्या की ओर संकेत किया है। बछनिया सरिफवा से प्यार करती है, जिसके फलस्वरूप वह गर्भवती हो जाती है। इसह बात का पता जब उसकी माँ को मालूम होता है, तब वह बहुत क्रोध करती है और यह जानने की कोशिश करती है कि उसका प्रेमी कौन है। बच्छनिया यह खबर अपनी प्रेमी को सुनाती है।

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 250
2. वही, पृ. 247

"उसे जिस दिन से यह मालूम हुआ कि बछनिया उसके बच्चे की माँ बननेवाली है, वह उसी दिन से बदल गया। उसका सारा ध्यान तो बच्छन के पेट में वैकर अख्तियार करनेवाले में था। उसकी शक्ल कैसी होगी, नाम क्या होगा।"[1]

कुछ दिनों के बाद बच्छन अपने प्रेमी के साथ कलकत्ता भाग जाती है और वहाँ शादी कर लेती है। परंतु उसकी माँ इस घटना के हादसे से आत्महत्या करती है। बच्छन के पिता यह समाचार पाकर बहुत दुखी होते हैं और कुछ दिनों बाद उसके पिता भी पत्नी की मृत्यु के शोक से कुएँ में कूदकर अपनी जान देते हैं।

उपर्युक्त घटना के चित्रण द्वारा लेखक यह विचार स्पष्ट करते हैं कि अवैध गर्भवती कन्या की समस्या का समाधान यही है कि वह उसी आदमी से शादी करे जिसके कारण वह गर्भवती हुई है। कुमारियों के इस प्रकार के व्यवहार के भयंकर परिणामों की ओर भी लेखक ने, बच्छन के माता-पिता की आत्महत्या के वर्णन द्वारा संकेत किया है।

3.6 विधवा समस्या -

हिंदी साहित्य में विधवा समस्या हमेशा महत्त्वपूर्ण समस्या समझी गई है। प्रेमचंद पूर्व के उपन्यास साहित्य में विधवा के तपस्वी जीवन की सराहना की जाती थी और विधवा के आदर्श को भारतीय संस्कृति की उज्ज्वल विशेषता समझा जाता था।

प्रेमचंद युग में विधवाओं की ओर देखने की दृष्टि में परिवर्तन आया। इस युग के उपन्यासकार सामाजिक समस्याओं के प्रति अधिक जागरूक दिखाई पड़ते हैं। वे इन समस्याओं की गहराइयों में उतरकर गहन चिंतन-मनन करके समुचित समाधान भी प्रस्तुत करते हैं।

विधवा समस्या समुचे हिंदू समाज के लिए कलंक की वस्तु है। प्रेमचंद ने 'वरदान' तथा 'प्रेमाश्रम' में विधवा समस्या का निरूपण अन्य समस्याओं के साथ किया है। 'वरदान' की विरजन के विधवा बनने का मूल कारण अनमेल विवाह की वैवाहिक समस्या है। प्रेमचंद विरजन का कोई समुचित समाधान नहीं कर सके। प्रेमचंद अपने व्यावहारिक जीवन में विधवा समस्या का समुचित समाधान कर लेने के बाद भी इन उपन्यासों में इस समस्या का कोई समाधान नहीं कर पाए। इस संबंध में डॉ. चंडिप्रसाद जोशी का मत अत्यंत उपयुक्त प्रतीत होता है। वे लिखते हैं-

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 125

"प्रेमचंद समस्या के चिंतन में युग से आगे नहीं बढ़ सके, समाज के पीड़ित वर्गों के लिए आश्रमों की व्यवस्था थी, इसे लेखक ने भी ज्यों-का-त्यों उसी समाधान को स्वीकार कर लिया।"[1]

आर्थिक अभावों से जूझना विधवा के लिए कठिन हो जाता है। 'प्रतिज्ञा' उपन्यास में पूर्णा कहती है- "मैं विश्वास के साथ कह सकती हूँ कि अगर उन बहनों को रुखी रोटियाँ और मोटे कपड़ों का भी सहारा होता तो वे अंतिम समय तक अपने सतीत्व की रक्षा करती।"[2]

राही मासूम रजा 'आधा गाँव' में हुसैन अली मियाँ की बहन उम्मुल हबीबा की स्थिति का चित्रण करते समय कहते हैं- "वह तो कोई बीस साल से सफेद कपड़े पहन रही थी। शादी के तीसरे दिन वह बेवा हो गई थी। उम्मुल हबीबा शादी-ब्याह के मौके पर अछूत हो जाती थी। दुल्हन के कपड़ों को वह छू नहीं सकती थी। धीरे-धीरे वह बेवगी की आदी हो गई और धीरे-धीरे उसे यह भी मालूम हो गया कि बेवा के करायज क्या हैं। एक बात के सिलसिले में उसका जेहन साफ नहीं था। जब आं-हजरत ने पहली शादी एक रांड़ बेवा से की तो क्या ये अशराफ आं-हजरत से बड़े हैं कि बेवा से शादी नहीं करते। लेकिन वह यह सवाल करती किससे ?"[3]

इस प्रकार लेखक ने यहाँ दिखाया है कि विधवाओं की समस्या का स्वरूप भारतीय मुसलमान परिवारों में अन्य समुदायों से भिन्न नहीं है। सभी जाति-धर्मों में विधवा समस्या भयंकर रूप में परिलक्षित होती है।

3.7 वेश्यावृत्ति -

विशेषकर नगरीय सामाजिक व्याधि का वेश्यावृत्ति प्रमुख कारण है। यह नगरीय जीवन की एक भयंकर समस्या है। इस समस्या से अनेक भीषण सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। व्यक्ति में यौन रोगों का विकास हो जाता है, अवैध संतान का जन्म होता है, जो समाज की ठोकरें खाने के बाद भी अपना जीवन व्यवस्थित नहीं कर पाता।

वर्तमान युग में वेश्यावृत्ति निरंतर बढ़ रही है। अब तक वेश्यावृत्ति केवल समाज द्वारा तिरस्कृत संबंधों तक ही सीमित थी। आज यह समाज द्वारा संबंधों के रूप में विकसित हो

---

1. डॉ. चंडीप्रसाद जोशी - हिंदी उपन्यास : समाजशास्त्रीय विवेचन, पृ. 118
2. प्रेमचंद - प्रतिज्ञा, पृ. 135
3. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 173

रहा है। मनोरंजन के केंद्र, दुकानों पर विक्रय कर्ता और चंदा एकत्रित करनेवाली संस्थाएँ सुंदर लड़कियों के माध्यम से अपने आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं। बड़े-बड़े कार्योलयों एवं कंपनियों में स्वागत कक्ष में इन्हें बिठाकर अथवा फैशन मॉडेल बनाकर भी सौंदर्य के माध्यम से लोग अपने स्वार्थों की पूर्ती करते हैं। इस वृत्ति से वैयक्तिक, पारिवारिक एवं सामाजिक विघटन होता है।

हिंदी साहित्य में वेश्या समस्या को अत्यंत सशक्त रूप में पहली बार 'सेवासदन' में उठाया है। 'सेवासदन' की सुमन वेश्या जीवन को अपनाती है, जिसका प्रेमचंद ने विविध दृष्टियों से विचार किया है। सुमन कहती है, "मैं एक ऊँचे कुल की लड़की हूँ। पिता की नादानी में मेरा विवाह एक दरिद्र मनुष्य से हुआ। लेकिन दरिद्र होने पर भी मुझ से अपना अपमान न सहा जाता था। जिसका होना चाहिए उसका आदर होते देखकर मेरे हृदय में कुवासनाएँ उठने लगती थीं।"[1]

प्रेमचंद ने 'सेवासदन' में इस समस्या के समाधान के कई मार्ग सुझाए हैं- "एक- वेश्यागामियों को वेश्यागमन के भयंकर परिणामों को समझाना, दो- वेश्याओं को सार्वजनिक स्थान से हटाना, तीन- वेश्याओं को आर्थिक सहायता देकर नागरीय जीवन से उबारना, चार- वेश्याओं को विधवाश्रमों में भेज देना।"[2] प्रेमचंद ने वेश्याओं को नगर से दूर रखने में ही कल्याण समझा है, इसीसे उपन्यास के अंतिम पृष्ठों में वेश्याओं में सद्वृत्ति जागृत कर दालमंड़ी को खाली कराकर अलईपुर को बसा दिया है और 'सेवासदन' की स्थापना कर दही है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिंदी के सशक्त साहित्यकारों ने इसको विभिन्न कोणों से परखा है। राही मासूम रजा 'आधा गाँव' में अपने क्षेत्र में पाई जानेवाली एक वेश्या का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि "टामी अपने जमाने की मशहूर वेश्या थी। रिटायर होने के बाद शिवभक्त हो गई और शहर के बाहर एक बाग में रहने लगी, जो उसकी जवानी के जमाने में उसे एक रईस ने दिया था।"[3]

वेश्याओं में नथ उतारने की प्रथा बहुत धूमधाम से मनाई जाती है और अनेक धनवानों में वेश्याओं की नथ उतारने के लिए होड़-सी लग जाती है, क्योंकि इसे वे गौरव का कार्य

---

1. प्रेमचंद - सेवासदन, पृ. 91
2. विशंवभरनाथ मानव - प्रेमचंद, पृ. 66
3. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 21

समझते हैं। इसी प्रवृत्ति की ओर संकेत करते हुए राही लिखते हैं कि "जब गुलाबीजान ने नथ पहना और यह खबर खान साहब को मिली कि नसीराबाद के ठाकुर साहब गुलाबीजान की नथ उतारने का फैसला कर चुके हैं तो खान साहब को ताव आ गया। बोले- "वह क्या खाकर गुलाबीजान की नथ उतारेगा। भाई साहब मरहूम ने उसकी बड़ी बहन की नथ उतारी थी, बाबा मरहूम ने उसकी खाला की नथ उतारी थी, इसीलिए गुलाबीजान की मैं उतारूँगा।"[1]

'टोपी शुक्ला' में तवाइफों एवं 'हिम्मत जौनपुरी' में मुंबई की सड़कों पर घूमनेवाली वेश्याओं के जीवन का सूक्ष्म चित्रण करते हुए लेखक ने उनके मन की व्यथा एवं समाज द्वारा उनके साथ किए गए घृणित व्यवहार को अत्यंत मार्मिक ढंग से प्रस्तुत करते हुए पाठकों के मन में इस असहाय नारियों के प्रति सहानुभूति उत्पन्न करने का प्रयास किया है।

'टोपी शुक्ला' में मुन्नीबाई तवाईफ का चित्रण इस प्रकार मिलता है- "वैसे तो शहर की सौ-सवा-सौ रेड़ियों की तरह यह भी एक रंड़ी थी, परंतु मुन्नीबाई ने अपने पेशे में भी धर्म का दामन नहीं छोड़ा था। उसे मालूम था कि एक-न-एक दिन तो भगवान को मुँह दिखलाना ही पड़ेगा। इसीलिए उसने मकान की एक कोठरी में एक शिवालय बनवा रखा था। रोज सवेरे नहा-धोकर वह नटराज भोले शंकर भूतनाथ की पूजा करती थी। और शाम को वह बत्तीसों हथियार सजाकर अपनी दूकान खोलती तो इसका खयाल रखती कि.... गाना तो जो चाहे वह सून ले परंतु कोई शुद्र या मलेच्छ रहने न पाए।"[2]

इसके द्वारा लेखक यह कहना चाहते हैं कि उस समय वेश्याओं में भी धर्म पूर्ण रूप से सर्वनाश नहीं हुआ था। उनके मन में भी भगवान का डर था और वे भी अपने पे में जाति-पांति, गोत्र, संप्रदाय आदि का खयाल रखती थी।

ये तवायफें अपनी पुत्रियों को भी सी पेशे में फंसाने से नहीं हिचकिचाती। उसी का चित्रण करते हुए लेखक कहते हैं कि जब तवायफ अखतरी ने देखा कि उसकी पुत्री अपने उस्ताद के पुत्र शमशाद से प्रेम करने लगी है तो "एक दिन अखतरी ने उसे चुपचाप गाजीपुर पहुँचा दिया और उसे मुशतरी के हवाले कर दिया। मुशतरी ने उसे समझाने की कोशिश ही नहीं की। उसने उसे

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 92
2. राही मासूम रजा - टोपी शुक्ला, पृ. 22

बना संवार कर खिड़की पर बिठला दिया। इमामबांदी ने जरा मुँह लटकाया ही था कि मुशतरी बरस पड़ी।'' ''मुँह सीधा करो नहीं तो इस्त्री कर दूँगी।''

उसके लहजे में न जाने क्या था कि इमामबांदी सहम गई। बस यह सहम जाना उसकी हार थी।''[1] इस उदाहरण के द्वारा लेखक यह बताना चाहता है कि जब तक समाज द्वारा उन्हें प्रोत्साहन मिलता रहता है तब तक एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी में नारी इसी व्यवसाय में जाने लगती है।

राही जी ने 'हिम्मत जौनपुरी' में हिम्मत और सड़क पर जीवन बितानेवाली जमुना नामक वेश्या के बीच प्रेम का वर्णन करते हुए इस प्रकार की वेश्याओं की समस्याओं का वास्तविक चित्र प्रस्तुत किया हैं। इन स्त्रियों का वेश्यावृत्ति अपनाने का प्रमुख कारण दरिद्रता है। ये स्त्रियाँ जन्म से मृत्यु तक का जीवन फुटपाथ पर बिताती हैं। इनके लिए घर नहीं होता। जमुना तो घर के अर्थ से भी अनभिज्ञ है। अतः जब हिम्मत कहता है कि गाजीपुर में उसका घर है तब वह पूछती है कि 'इ घर का होता है राजा ?' हिम्मत उत्तर देता है कि 'इतो उहे बतायेगा जो घर आंगन देखिस होय ?' तब बिल्लो पूछती है कि आंगन का होता है ? हिम्मत कहता है 'आंगन ओको कहते हैं बिल्लो कि चारपाई बिछाई कर रात को लेट जाओ तो दूर-दूर तक मार आसाने आसमान दिखाई दें। यह सुनकर जमुना हँसते हुए उत्तर देती है कि, ''अरे तो अंगन-अंगन का बोलता है। फूटपाथ बोल फुटपाथ।''[2] इससे लेखक यही स्पष्ट करते हैं कि उनके मन में घर, आंगन एवं उनसे प्राप्त सुखों की स्पष्ट कत्थना तक नहं होती।

राही जी एक और उपन्यास 'सीन-75' में भी वेश्याओं के अन्य वर्ग का चित्रण किया है जो 'काल गर्ल' कहलाती हैं।

काल गर्ल उनको कहते हैं, जो सड़कों पर घूनेवाली निम्नस्तर की वेश्याओं के विपरीत अपने क्षेत्र में अपना एक विशिष्ट स्थान रखती हैं और सिर्फ उच्च लोगों से ही संपर्क स्थापित करती हैं। राही जी ने नजमा का चित्रण इस तरह किया है- ''नजमा एक काल गर्ल थी। बनारस में तो वह (सीमा) यूँ बेधड़क काल गर्ल से मिलने के बारे में सोच भी नहीं सकती थी। रमा और मिसेज गुप्ताने उसे नजमा के बारे में कई जरूरी बातें बता दी थीं।

---

1. राही मासूम रजा - हिम्मत जौनपुरी, पृ. 46
2. वही, पृ. 114

1. कि नजमा बत्तीस साल से एक दिन कम नहीं है। पर कहती है कि चौबीस की है।
2. कि नजमा इतनी खूबसूरत नहीं है, जितनी दिखाई देती है।
3. कि एक रात के चार पाँच सौ लेती है।
4. कि सुरसिगार के मर्दों के साथ कनसेशन करती है।
5. कि किसी सेठ ने तो उसको रख छोड़ा है। फ्लैट का किराया और मेकअप का सारा इम्पोर्टेड समान वही देता है।
6. कि नजमा ने हरीश राय को छोड़ा है।
7. कि पहले नजमा बोली के नाम से फिल्मों में छोटे-छोटे रोल किया करती थी और असिस्टेंट डाइरेक्टरों में बहुत पोपुलर थी।''[1]

लेखक काल गर्ल की अपेक्षा सड़कों पर जीवन बितानेवाली दरिद्र वेश्याओं का चित्रण सहानुभूतिपूर्ण प्रस्तुत करते हैं। हिम्मत जौनपुरी से जब राजा कहता है कि तुम साला रंड़ी को औरत बोलता है, तब वह उत्तर देता है ''यह तुम्हारी तरह असली डिबियों में नकली बूटपालिश का धंधा तो नहीं करती। दूध में पानी तो नहीं मिलाती। चावल में कंकर-पत्थर तो नहीं डालती। नकली दवा नकली दारू, नकली सपने, नकली भविष्य तो नहीं बेचती। बिना किसी मिलावट, बिना किसी भूमिका, बिना किसी भाषण के अपना बदन बेचती है। अपनी इज्जत बेचती है। यह इसकी बेइज्जती नहीं, इज्जत के दाम हैं।''[2]

इस प्रकार राही जी ने अनेक प्रकार की वेश्याओं के जीवन का चित्रण करके सामाजिक समस्या की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट किया है। उसके साथ-साथ वेश्याओं के दुःखपूर्ण अंत की ओर भी पाठकों का ध्यान खिंचने की कोशिश की है।

3.9 विवाह विच्छेद की समस्या -

विवाह विच्छेद की समस्या आज के युग की एक प्रमुख समस्या बन गई है। अनेक स्त्रियों से विवाह की छूट पुरुषों को मिल गई और दूसरा विवाह करने की नारी की स्वाधीनता पर

---

1. राही मासूम रजा - सीन-75, पृ. 92-93
2. वही, पृ. 94-95

कठोर बंधन लगा दिए गए। वैज्ञानिक चिंतन से तथा धार्मिक रूढ़ियों के प्रतिपादन क्षीणतर होने के कारण विवाह विच्छेद की समस्या पर अधिक सहानुभूति से विचार किया जा रहा है।

सामाजिक चिंतन-मनन का प्रभाव साहित्य पर पड़ता है, इसलिए उपन्यासों में भी उन परिस्थितियों और कुंठाओं का चित्रण होना स्वाभाविक है, जो विवाह विच्छेद की समस्या की ओर संकेत करते हैं।

इस्लाम धर्म में पति एवं पत्नी दोनों को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वे चाहे तो तलाक लेकर एक-दूसरे से अलग हो सकते हैं। वास्तव में इस्लाम धर्म के तलाक देने की पद्धति इतनी सरल बनाई गई है कि कोई भी स्त्री या पुरुष एक-दूसरे को किसी भी क्षण तलाक देकर अलग हो सकता है। लेकिन कभी-कभी इस सुविधा का दुरुपयोग भी होता है। व्यक्ति अधिक क्रोध या भावावेश की अवस्था में बिना सोच-समझे अपनी पत्नी को तलाक दे देता है, जिसके लिए उसे बाद में पछतानो से कोई लाभ नहीं होता क्योंकि जिसको तलाक दे जाती है उससे पुनर्विवाह सरलतापूर्वक नहीं किया जा सकता।

राही जी ने 'हिम्मत जौनपुरी' में इसी प्रकार भावावेश में किए गए एक तलाक का चित्रण करते हुए कहा है कि शेख शुजाअत अली दिलगीर जौनपुरी अपने ससुरालवालों से बहुत नाराज थे। इसलिए उनकी पत्नी जब कभी अपने घरवालों की बात निकालती तब दिलगीर साहब खफा हो जाते। 'मैंने लाख मना किया है कि तुम इस घर में अपने बड़के बाबा वगैरह का जिक्र न किया करो।'

यह सुनकर बेगम बो बिगड़ जाती। आखिर एक दिन बात इतनी बढ़ी कि छिहत्तर बरस के दिलगीर जौनपुरी ने चौसठ बरस की बेगम बो को तलाक दे दी। घर में सन्नाटा हो गया। सब चुप। बस एक आरजू जौनपुरी चुप न रह सके। नतीजे में दिलगीर साहब ने आरजू जौनपुरी को घर से निकाल दिया। यह उसी समय अपनी माँ को लेकर घर से निकल गए।''[1]

इस प्रकार लेखक ने दिखलाया है कि वृद्धावस्था में कभी-कभी भावावेश में तलाक दे दिया जाता है, जिसके कारण वर्षों तक बिताए गए सुखमय पारिवारिक जीवन का सर्वनाश हो

---

1. राही मासूम रजा - हिम्मत जौनपुरी, पृ. 18

जाता है और परिवार के टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। फलतः कुंछ बच्चे पिता के साथ रहते हैं तो कुछ बच्चे माता के साथ।

3.10 आत्महत्या की समस्या -

आत्महत्या के अनेक कारण हैं, जिनमें आर्थिक और मनोवैज्ञानिक कारण सबसे महत्त्वपूर्ण हैं। प्रत्येक समाज की संस्कृति में भी कोई-न-कोई विशेषता ऐसी होती है जो कि आत्महत्या को उत्साहित करती है। उदाहरण के लिए हमारे देश में दहेज प्रथा, विधवा-विवाह प्रथा, संयुक्त परिवार और सास का पुत्र-वधू के साथ झगड़ा आदि बातें आत्महत्या का कारण बन जाती हैं। सामाजिक और आर्थिक कारणों के अलावा मनोवैज्ञानिक कारण भी है।

अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ जैसे कि बेकारी, निर्धनता, भूख और अन्य वस्तुओं से वंचित होना, बुरा स्वास्थ्य, मानसिक विकार, कुरूपता आदि बातें आत्महत्या के लिए प्रवृत्त करती हैं। प्रतिष्ठा, पद, प्रेम की हानि और उनके साथ ही उत्पन्न होनेवाली अनेक भावनाएँ जैसे कि अपमान और व्यक्ति गत संबंधों की उलझनें बचाव के साधन के रूप में मृत्यु की शरण लेना अनिवार्य कर देती हैं।

प्रेमचंद की रचनाओं में मानसिक संघर्ष एवं ग्लानि के कारण होनेवाली आत्महत्याओं का भलीभांति चित्रण हुआ है। राही जी ने 'टोपी शुक्ला' उपन्यास के आरंभ में ही बतलाया है कि टोपी शुक्ला को आत्महत्या करके ही अपने जीवन का अंत करना पड़ा क्योंकि वह परिस्थितियों से समझौता नहीं कर सका। लेखक ग्रंथ की भूमिका में कहते हैं कि "मुझे यह उपन्यास लिखकर कोई खास खुशी नहीं हुई। क्योंकि आत्महत्या सभ्यता की हार है। परंतु टोपी के सामने और कोई रास्ता नहीं था। यह टोपी मैं भी हूँ और मेरे ही जैसे और बहुत से ही लोग भी हैं। हम लोगों और टोपी में एक अंतर है। हम लोग कहीं-न-कहीं, किसी-न-किसी अवसर पर 'कप्रोमाइज' कर लेते हैं और इसीलिए हम लोग रहे हैं। टोपी कोई देवता या पैगंबर नहीं था। किंतु उसने 'कंप्रोमाइज' नहीं किया और इसीलिए उसने आत्महत्या कर ली।"[1]

टोपी का जीवन शुरू से अंत तक मानसिक संघर्ष की कथा है। टोपी का जन्म एक हिंदु परिवार में होता है। बचपन में उसकी दोस्ती इफ्फन से होती है और वह उसके साथ बहुत

---

1. राही मासूम रजा - टोपी शुक्ला, पृ. 7

घुलमिल जाता है। जिससे मुसलमान संस्कारों का उस पर प्रभाव पड़ता है। फिर उच्च शिक्षा पाने के लिए वह अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में प्रवेश करता है। वहाँ पर वह एक मुस्लिम महिला सलीमा से प्रेम भी करने लगता है। परंतु वह जानता है कि वह उसके साथ शादी नहीं कर सकता। इसीलिए उसके मस्तिष्क में मानसिक संघर्ष का एक तूफान खरा होता है। अपने विचारों को वह अपनी प्रेमिका को लिखे एक पत्र में इस प्रकार व्यक्त करता है कि "क्या हम शादी नहीं कर सकते ? तुम कह सकती हो कि तुम मुसलमान हो और मैं हिंदू। बच्चे बहुत चितकबरे होंगे। परंतु क्या यह नहीं हो सकता कि हम बच्चों की बात बच्चों पर ही छोड़ दें।"[1]

टोपी को जीवन के हर मोड़ पर असफलता का सामना करना पड़ता है। कभी उसे हिदू होने के कारण मुस्लिम संस्थाओं में नौकरी नहीं मिलती, तो कभी उसे मुस्लिम विश्वविद्यालय में अध्ययन करने के कारण नौकरी नहीं मिलती। टोपी अपने मित्र इफ्फन की पत्नी सकीना से सगी बहन के समान प्रेम करता है, वह भी इसे भाई के समान प्रेम करती है। परंतु उसके पिता की हत्या हिंदुओं ने की थी, इसी कारण वह उसे राखी बाँधने से इन्कार करती है।

जब इफ्फन अपनी पत्नी के साथ अलीगढ़ छोड़कर नौकरी के लिए कश्मीर चला जाता है, तब टोपी, इफ्फन के घर में अकेला रहता है। वह एकांत से घबराने लगता है और सोचने लगता है कि उसका जीवन सर्वत्र निराशाओं से ही घेरा हुआ है, जिसका समाधान जीवन का अंत है। वह मानसिक संघर्ष के अतिरेक में आत्महत्या कर बैठता है। उसकी मृत्यु के दूसरे दिन उसे एक स्थान से नौकरी का पत्र और सकीना के पास से राखी के साथ एक पत्र पहुँचता है। परंतु इसके पहले ही टोपी इस दुनिया से निकल चुका है।

इस प्रकार इस समस्या के द्वारा लेखक यहाँ यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि किसी समस्या का हल आत्महत्या नहीं है। आत्महत्या की समस्या राही जी के एक ही उपन्यास 'टोपी शुक्ला' में पाई जाती है।

3.11 दहेज की समस्या -

दहेज की समस्या राही मासूम रजा के 'टोपी शुक्ला' और 'कटराबी जार्जू' इन दो उपन्यासों में पाई जाती है। दहेज समस्या आधुनिक काल में विवाह संस्था का सबसे बड़ा

---

1. राही मासूम रजा - टोपी शुक्ला, पृ. 124

अभिशाप है। इसके कारण सामाजिक वातावरण दूषित बन जाता है और पारिवारिक जीवन अशांत बन जाता है। आजकल दहेज के कारण विवाह धार्मिक संस्कार न रहकर सौदे का विषय बन गया है। दहेज के प्रचार के कारण लोगों में गलत धारणा फैल गई है कि अधिक-से-अधिक रूप में खर्च करने पर ही अच्छा लड़का मिल सकता है। दहेज लेना चारित्रिक पतन का द्योतक है। परंतु सामाजिक दुर्व्यव्यस्था के कारण रुपए और विवाह के बीच एक विलक्षण स्थापित हो गया है। चोरी, बेईमानी करके भी लोग अधिक दहेज देकर लड़की को धनी परिवार में भेजकर निश्चिंत हो जाना चाहते हैं। आज दहेज प्रथा समाज में एक भयंकर रोग की तरह फैल गई है, इसे सभी लोग स्वीकार करते हैं। वस्तुतः दहेज का प्रसार सामाजिक पतन का द्योतक है।

आधुनिक हिंदी साहित्य में विविध अंगों द्वारा इस प्रथा के दुष्परिणामों को समाज के सामने उपस्थित किया गया है। प्रेमचंद ने अपने 'सेवा सदन', 'निर्मला' उपन्यासों में दहेज प्रथा और उसके दुष्परिणामों का बहुत ही सुंदर चित्रण किया है। ''इन उपन्यासों में प्रेमचंद ने दिखलाया है कि दहेज प्रथा के कुपरिणाम सर्वाधिक मध्यमवर्गीय नारी झेलती है।''[1]

'सेवा सदन' में दरोगा कृष्णचंद जब सुमन के लिए वर खोजने गए तो ''उन्हें यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि वरों का मोल उनकी शिक्षा के अनुसार है। ....ऐसी स्थिति में दरोगा कृष्णचंद के सामने दो ही उपाय शेष रह जाते हैं- या तो पुत्री का विवाह किसी कुपात्र से करके उस उत्तरदायित्व से मुक्त हो जायें या फिर रिश्वत लेकर दहेज की रकम जुटाएँ। कृष्णचंद समझ-बूझकर कन्या को कुएँ में ढकेलने के लिए तैयार नहीं हैं, इसलिए वे दूसरे उपाय का आश्रय लेते हैं।''[2]

राही मासूम रजा ने अपने उपन्यास 'टोपी शुक्ला' मे मुन्नी बाबू के विवाह का वर्णन किया है। लेखक कहते हैं कि, यदि माता-पिता के पास दहेज देने के लिए धन हो तो अनेक त्रुटियों के होने पर भी विवाह हो जाते हैं।

मुन्नी बाबू जब अपने पिता के कहने पर विवाह से इन्कार करता है तब ''डाक्टर साहब बहुत परेशान हुए क्योंकि लड़कीवाले तगड़े आसामी थे। एक लाख नकद, एक मोटर, पाँच

---

1. डॉ. रक्षापुरी - प्रेमसाहित्य में व्यक्तियों और समाज, पृ. 122
2. प्रेमचंद - सेवासदन, पृ. 6

सेर चाँदी, डाक्टर साहब ने ऊँच-नीच पर विचार किया और मुन्नी बाबू को समझाने का फैसला किया।''[1]

राही जी लाजवंती का वर्णन करते हुए कहते हैं कि ''लाजवंती बहुत अच्छी लड़की थी। बस एक आँख जरा खराब थी, बायें पैर को घसीटकर चलती थी। रंग जरा ढंका हुआ था। और मुँह पर माता के निशान थे। परंतु इन बातों से क्या होता है ? शरीफ लोगों में कहीं बहुओं की सूरत देखी जाती है। सूरत तो होती है रंड़ी की। बीबी की तो तबियत देखी जाती है। लाजवंती सूरत और तबियत दोनों ही की अच्छी थी।''[2] वास्तव में लाजवंती इतनी कुरूप थी कि उसके संबंधियों में से कोई भी उसका विवाह करने के लिए तैयार नहीं था। लेकिन दहेज का लोभ दिखाकर वह अच्छा पति प्राप्त करने में सफल हो ही जाती है। इसी ओर संकेत करते हुए राही जी कहते हैं कि लाजवंती तो एक बिगड़ी हुई शक्ल थी। बराबर वालों में कोई वर नहीं मिला। नीचे के लोगों ने भी लक्ष्मी की गद्दी पर मूर्ति पर बेटे की बलि देना स्वीकार नहीं किया। बस एक पंडित भृगुनारायण नीले तेलवाले ऐसे मिले, जिन्होंने कहा कि लक्ष्मी-लक्ष्मी होती है।''[3]

इस प्रकार लेखक दहेज प्रथा के दुष्परिणामों के चित्रण से स्पष्ट करके यह दिखलाना चाहते हैं कि इस प्रथा के प्रचलन के कारण धन के अभाव से सुंदर महिलाओं को भी वर मिलना कठिण हो गया है।

राही जी ने 'कटरा बी आर्जू' में भी इस समस्या की ओर संकेत किया है। राही जी ने स्पष्ट किया है कि दहेज समस्या भारतीय सामाजिक जीवन को एक बड़ा अभिशाप है जिसके कारण अनेक परिवारों का जीवन छिन्न-भिन्न हो गया है।

प्रत्येक भारतीय संपन्न परिवार के सदस्यों में इसी बात की होड़ लगी रहती है कि दहेज में अधिक-से-अधिक रुपए प्राप्त करके अपना जीवन गौरवमय बनाएँ। इस प्रकार का चित्रण लेखक 'कटरा बी आर्जू' में करते हैं। सी. आई. डी. इंस्पेक्टर अशरफुल्लाह खाँ की पत्नी आलम आरा बेगम अपनी इकलौती बेटी लैला की शादी बड़े चाव और हौसले से करना चाहती थी। वह तो

---

1. राही मासूम रजा - टोपी शुक्ला, पृ. 22
2. वही, पृ. 23
3. वही, पृ. 23

चाहती थी कि, "यू. पी. पुलिस के हलकों में धूम जाये कि साहब ब्याही तो गई अशरफुल्लाह की बेटी। एक सौ दस तो जोड़े दिए। कोई जोड़ा पाँच सौ से कम का नहीं था। पंद्रह सेट गहनों के कि कोई सेट महीने में दोबारा न पहनना पड़े। फिर पुरानी तर्जवाले खानदानी जेवर अलग कि फिर उनका फैशन आ गया है। तो आलमआरा की ददिया सासवाला नौरत्न, गुलूबंद याकूतवाला जैशन और दस्तबंद, जड़ाऊँ पातवालियाँ और कंगन, मोतियों का सतलड़ा....चाँदी के सब बर्तन तो खैर दिए ही जायेंगे। दूल्हा को एक कार और प्लैटीनम का सिगरेट केस तो देना ही पड़ेगा, फिर बारातवालों का जोड़ा। वर बिरादरी, पुराने नौकर-चाकर सात-आठ लाख से कम खर्च नहीं होगा।"[1]

राही जी यहाँ स्पष्ट करना चाहते हैं कि संपन्न परिवारों के सदस्य अपने समर्थ्य से अधिक खर्च करके गर्व का अनुभव करते हैं। परंतु भारत में प्रधानता उन मध्यवर्गीय परिवारों की हैं जो इन संपन्न परिवारों की देखा-देखी अधिकाधिक दहेज माँगने लगते हैं। भारतीय दरिद्र परिवारों की यह विचित्रता है कि वे केवल आर्थिक दृष्टि से ही दरिद्र नहीं हैं। शिक्षा के अभाव के कारण विचारों की दृष्टि से भी बहुत पिछड़े हुए हैं, आधुनिक संपन्न परिवारों में उच्च शिक्षा के प्रकाश के कारण उनके विचार प्रगतिशील हैं। वहाँ पर प्रत्येक परिवार के सभी सदस्य शिक्षा प्राप्त करना और कुछ-न-कुछ कमाना जीवन को सुखी बनाने का साधन समझते हैं। परंतु अनपढ़ लोग अत्यंत दरिद्र होने पर भी वे स्त्रियों की शिक्षा देना एवं उन्हें नौकरी के लिए भेजना बुरा समझते हैं। राहीजी शम्सू मियाँ के परिवारों के उदाहरण द्वारा इसी बात को स्पष्ट करते हैं।

शम्सू मियाँ अत्यंत दरिद्र होने के कारण उनके पास कुछ भी धन नहीं है। इसीलिए शहनाज अपनी स्कूली पढ़ाई समाप्त करने पश्चात् अध्यापिका का कार्य करना चाहती है। इस प्रकार वे वह अपने पैरों पर खड़े होकर अपने दहेज का प्रबंध करना चाहती है। परंतु शम्सू मियाँ इस विचार का विरोध करते हुए कहते हैं कि "मुदा ऊई कैयसे साय लिहिन कि हम तुम्हें नौकरी करे देंगे ? बिआह के बाद जो जी चाहे करवा ले। मुदा कि आह के पहले हमरी बेटी नौकरी-ओकरी नहीं कर सकती। साफ बात है।"[2]

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जु, पृ. 157
2. वही, पृ. 84

इस प्रकार राही जी यह स्पष्ट करते हैं कि शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हुए होने के कारण इन दरिद्र परिवारों में भावों की उदारता का भी अभाव होता है और वे स्त्रियों को शिक्षा देने एवं उनसे नौकरियाँ करवाने के विरोधी प्राचीन विचारों के पक्षपाती होते हैं। ऐसे विचारों से न तो इनकी आर्थिक स्थिति ही सुधरती है और न विवाह के समय दहेज की समस्या का समाधान हो पाता है। भारत में विवाह तो एक धार्मिक संस्था है और जब तक विधिवत विवाह की रीतियों से नहीं गुजरा जाता तब तक कोई स्त्री-पुरुष पति-पत्नी घोषित नहीं किए जाते। यह विधिवत विवाह उसी वक्त संपन्न हो पाता है जब वर को उसकी इच्छानुसार दहेज देने की वधू के पिता में सामर्थ्य होती हैं। इसी ओर संकेत करते हुए चित्रपट पर दिखाई जानेवाली प्रेमकथाओं को विवाह में परिणत होते हुए दिखाए जाने की प्रथा से उसकी तुलना राही जी करते हैं।

शहनाज अपने प्रेमी को एक पत्र में लिखती है, "मुझे तो लगता है कि हमारी शादी शायद ही हो सके। दहेज हमारी दुनिया में हमारी मुहब्बत से बड़ा है, तुमने 'मुगले आजम का वह गाना तो सुना होग : जब प्या किया तो डरना क्या। मुझे निकाल क्यों नहीं ले जाते।"[1] इस पत्र का उत्तर देते हुए प्रेमी लिखता है "फिल्मी और जिंदगी में बड़ा फर्क होता है। फिल्म हिरो-हीरोइन की शादी पर खत्म हो जाती है। शादी के बाद दोनों पर क्या गुजरती है यह कोई नहीं जानता। मैं तुम्हें निकाल कर ला सकता हूँ। फिर कटरा मीर बुलकि छोड़ना पड़ेगा। नौकरी से निकाल दिया जाऊँगा। नौकरी है तब तो खर्च चलता नहीं। नौकरी भी न होगी तो क्या करेंगे ?"[2]

उपर्युक्त उदाहरण से राही जी स्पष्ट करते हैं कि भारतीय परिवारों में दहेज के कारण विवाह अनिश्चित काल के लिए रूक जाता है।

राही जी इस ओर संकेत करते हैं कि मुसलमानों के लिए दहेज की समस्या कोई समस्या नहीं वरना इस्लाम धर्म के प्रवर्तक को भी इस दहेज प्रथा को निभाना पड़ा। लेखक कहते हैं कि मास्ट बदरूलहसन की शादी उसकी तरफ से दहेज के कारण। माना कि मास्टर के अब्बा सिर्फ लड़की माँग रहे हैं पर फिर भी शम्सू मियाँ का कुछ फर्ज था। दहेज तो ओ हजरत ने अपनी बेटी को

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 69
2. वही, पृ. 69

भी दिया था। कौन कहे कि मौला अली ने कहा दिया था कि दहेज नहीं मिलेगा तो बरातवरात लौटा के जाएँगे।''[1] इस प्रकार राही जी ने दहेज समस्या का अत्यंत बारीकी से विश्लेषण किया है।

3.11 जातिवाद की समस्या -

'जातिवाद की समस्या' का विवेचन-विश्लेषण राही मासूम रजा के उपन्यासों में ज्यादा दिखाई देता है। उन्होंने आधागाँव उपन्यास में भारतीय मुसलमानों में पाई जानेवाली जातिवाद की समस्या का विस्तार से चित्रण किया है। आज कल भारत में यह समस्या प्रमुख रूप से पाई जाती है। भारत में केवल हिंदुओं में ही नहीं तो मुसलमानों में भी यह समस्या पाई जाती है। भारत में तुर्क और गैर तुर्कों में बाहर से आए मुसलमान और परिवर्तित एवं जन्मजात मुसलमानों में, अफगानी वंशज तथा गैर अफगानों में अनेक भेदभाव और ऊँच-नीच की भावना पाई जाती है। इसी प्रकार सैयद मुघल पठान अपने आपको शेखों आदि से श्रेष्ठ मानते हैं। भारत में मुसलमानों के दो प्रमुख समुदाय सुन्नी तथा शीया हैं जिनमें आपस में अकसर झगड़े होते रहते हैं। हिंदी उपन्यासकारों ने इस समस्या का चित्रण विस्तार से किया है। 'कंकाल' में जातिवर्ग भेद के यथार्थ रूप का उद्‌घाटन किया है। रामरतन भटनागर की मान्यता है कि, '' 'कंकाल' में जातिवर्ण भेद पर कुठाराघात है, तो 'तितली' में धनमर्यादा तथा आर्थिक ऊँच-नीचता पर व्यंग्य।''[2]

राही जी ने अपने दादा के विवाह की चर्चा करते हुए लिखा है कि उन्होंने नईमा दादी को 'निकाह में ले लिया और फिर उनके लिए यह खलवत बनवाई। नईमा दादी बदरहाल जुलाहिन थी और सौदानियों के साथ नहीं रह सकती थी, पुराने जमाने के लोग इसका बड़ा खयाल रखते थे कि कौन कहाँ बैठ सकता है और कहाँ नहीं।''[3]

उसी प्रकार सौदानियों का निम्न जाति की महिला संगटिया बो से किया गया व्यवहार यह स्पष्ट कर देता है कि उनमें अस्पृश्यता की भावना भी पाई जाती है। जब झंगरियों बो सालीमा से मिलने आयी तब 'काहे रे।' उन्होंने झंगरिया बो से पूछा ''अइसे ही सोचती कि तनी बीवी को सलाम कर लई।'' झंगरिया बो ने कहा।

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 68
2. इंद्रनाथ मदान - जयशंकर प्रसाद : चिंतन और कला, पृ. 358
3. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 17

"पान खइई ? सकिना ने पूछा। झंगरिया बो ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने अपना हाथ फैला दिया और सकीना ने फैले हुए हाथ पर तह किया हुआ पान का एक बीड़ा ऊपर से छोड़ दिया जो उसकी हथेली पर गिरकर खुल गया। झंगरिया ने सलाम करके वह पान खा लिया और सकीना असिया के लिए गिलौरी बनाने लगी।"[1]

सैदानी और गैर सैदानी का अंतर तो जन्मजात होता है, क्योंकि सैयद और सैदानियाँ वे लोग होते हैं जो अपने आपको इस्लामधर्म के प्रवर्तक हजरत मुहम्मद साहब के वंशज मानते हैं। किंतु कुछ और सैयद धनवान हो जाने पर अपने आपको सैयद घोषित कर देते हैं। इसी प्रवृत्ति की ओर इशारा करते हुए राही जी कहते हैं कि "हम्माद मियाँ जब तक इस छोटी-सी खिलवत में रहते थे उस वक्त तक उनकी बीवी किसी सैदानी से यूँ तुनक नहीं सकती थी। लेकिन दो मंजिला पुख्ता मकान में रहने से बहरहाल सैयद हो जाते हैं। कुबरा भी सैदानी बन चुकी थी। हट तो यह है कि हम्माद की माँ नईमा बो थी सैदानी बन चुकी थी, जबकि उसके मायकेवाले अब तक जुलाहे के जुलाहे थे और गंगौली ही में करघा चला रहे थे।"[2]

कमालुद्दीन के स्कूल में शिक्षा पानेवाले छात्रों का वर्णन करते हुए राही जी कहते हैं कि उस महर से "पड़ोस के जुलाहों, दागदार सैयदो और खरे गरीब सैयदों के लड़के-लड़कियाँ दो का पहाड़ा याद करने में मशगूल थे।"[3] इस प्रकार राही जी स्पष्ट करते हैं कि भारतीय मुसलमान समाज में भी जाति के आधार सामाजिक और विभाजीकरण की समस्या पाई जाती है।

राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' की तरह ही 'टोपी शुक्ला' में भी हिंदू-मुसलमान के बीच प्रेम को विवाह में परिणत न होते हुए दिखाकर जातिवाद की समस्या की ओर संकेत किया है।

टोपी शुक्ला अलीगढ़ विश्वविद्यालय में अध्ययन करता है। सलीमा नामक शिक्षार्थिनी से उसे प्रेम हो जाता है। परंतु टोपी में दिल की बात कहने का साहस नहीं था। टोपी अपने दिल के प्रेमभाव को प्रकट करने के लिए सलीमा के नाम पत्र लिखता है, परंतु उसे भेजने की उसमें हिम्मत नहीं होती। वह उसे फाड़ डालता है। इसी घटना का वर्णन करते हुए राही जी कहते हैं

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 117
2. वही, पृ. 221
3. वही, पृ. 223

कि "टोपी वेटिंग रूम में बैठा सलीमा को खत लिख रहा था। ....तुम चाहो तो यह खत मुमताज आया को दिखा दो। और वह चाहे तो मेरा रेजिस्ट्रेशन करवा दे। फिर भी मैं आज तुमसे यह कहना चाहता हूँ कि मैं तुमसे इतना डरता हूँ कि तुम्हें अपने आपसे दूर नहीं रख सकता। क्या हम शादी नहीं कर सकते ? तुम यह सकती हो कि तुम मुसलमान हो और मैं हिंदू। बच्चे बहुत चितकबरे होंगे। परंतु क्या यह नहीं हो सकता कि बच्चों की बात हम बच्चों पर ही छोड़ दें ?.....

टोपी ने इस खत को कई बार पढ़ा। फिर उसने वह खत फाड़ डाला। वह यह खत भेज नहीं सकता था। उसे मालूम था कि ऐसे खत केवल सस्ती कहानियों में लिखे जाते हैं। जीवन में इस प्रकार के खतों की कोई गुँजाइश नहीं। परंतु यह खत लिखकर सीने का बोझ हलका हो गया।"[1]

यहाँ पर राही जी यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि अंतर्जातीय विवाह के लिए भारत में अभी अनुकूल वातावरण उत्पन्न नहीं हो पाया है। राही जी के 'ओस की बूँद' उपन्यास में शहला और ठाकुर शिवनारायण सिंह के बीच प्रेम के द्वारा जातिवादी की समस्या की ओर संकेत किया हुआ मिलता है। आधुनिक भारतीय समाज अभी तक उस उन्नत दशा तक नहीं पहुँचा, जहाँ वह संप्रदाय धर्म आदि के बंधनों से ऊपर उठकर प्रत्येक पुरुष एवं स्त्री को केवल एक परुष एवं स्त्री के रूप में स्वीकार करे तथा उनके बीच प्रेम को विवाह में परिणत होते देखकर ऊँगली उठाए।

शिवनारायण शादीशुदा था, उसके दो बच्चे भी थे। फिर भी वह शहला से प्रेम करने में नहीं हिचकता। वह शहला से कहता है कि 'मैं तुम्हारे लिए घर-बार, माता-पिता, बाल-बच्चे सबको छोड़ दूँगा।' शहला भी उससे प्रेम करती है। परंतु वह जानती थी कि वह शिवनारायण से विवाह करके सूखी नहीं हो सकती। अतः वह उसको उत्तर देते हुए कहती है कि "सबको छोड़ देना किसी सवाल का हल नहीं है ठाकुर साहब। आदमी कोई गुलदान नहीं होता कि उसे एक कमरे से उठाकर दूसरे कमरे में रख दिया जाए। इस घर की चहीती लड़की हूँ ठाकूर साहब। मैं आधी तिहाई चीजों को नहीं लेती और आप पूरे-के-पूरे मुझे मिल नहीं सकते। किसी दिन पूरे बनकर आइए मरे सामने, तब देखूँगी कि आप कैसे लगते हैं मुझे।"[2]

---

1. राही मासूम रजा - टोपी शुक्ला, पृ. 124
2. राही मासूम रजा - ओस की बूँद, पृ. 113

यह सुनकर वह कहता है "मैं समझा नहीं।" तब अपने मत को स्पष्ट करते हुए शहला कहती है कि "यह हमारे इस मुलक की रीति है ठाकुर साहब कि लड़कियाँ बिदा होकर दिल में नहीं जाती। घर में जाती हैं आप अपने घर की ईंट हैं। सिर्फ एक ईंट। और एक घर में हजार-हजार ईंटे होती हैं। दादा, परदादा, माँ,बाप, चाचा, मामूँ, भाई, फैमिली, फ्रैण्डस.... क्या आप के घर की हर ईंटें मुझे कबूल करेंगी ? मैं आपसे शादी नहीं कर सकती। इसलिए नहीं कि आपसे बाल-बच्चे हैं बल्कि मैं आपको मुसलमान बनाना नहीं चाहती और खुद हिंदू होना नहीं चाहती। चूँकि मैं मजहब को मानती हूँ इसलिए सिविल मैरेज नहीं कर सकती। बीवी मैं आपकी बन नहीं सकती। दासी बनने पर मैं तैयार नहीं हूँ।"[1]

अंतर्जातीय विवाह में दोनों में से किसी एक को अपना धर्म परिवर्तन करना पड़ता है। भारत एक धर्म-प्रधान देश है। जहाँ अत्यंत पिछड़े हुए अनपढ़ लोगों में धार्मिक संस्कार इतने गहरे पैठे हुए हैं कि वे किसी भी अवस्था में उनकी अवहेलना तथा उल्लंघन नहीं कर सकते। यद्यपि भारत सरकार की ओर से अनुमति होकर भी समाज यह अनुमति नहीं देता। भारतवासी प्राचीन आदर्शों को लेकर ही आगे बढ़ते हैं।

राही जी के 'दिल एक सादा कागज' उपन्यास में भी इस समस्या का जिक्र पाया जाता है। शंकरदयाल और रुकय्या की शादी का चित्रण किया है। शंकरदयाल एक पापुलर राइटर थे। उनकी दूसरी पत्नी पागल थी और पहली का देहांत हो चुका था। पहली पत्नी की तीन बेटियाँ थी। दूसरी पत्नी को बेटा हुआ था और पाँचवी बेटी हुई। कुलमिलाकर शंकरदयाल छः बच्चों के बाप थे। फिर भी शंकरदयाल रुकया से शादी करना चाहते थे। यह शादी प्यार की शादी न होकर सहूलत की शादी थी। राही जी रुकय्या का वर्णन करते हैं कि "रुकय्या का किस्सा यह हुआ कि जब शादी की उम्र थी तो उसे कोई लड़का पसंद न आया और जब वह शादी के लिए डेसपरंट हुई तो पता चला कि उसकी खेप के तमाम लड़कों की शादीयाँ हो चुकी हैं। ....धीरे-धीरे वह अंदर से अकेली होने लगी। और ऐसे में शंकर दयाल से उसकी पहली मुलाकात हुई और दोनों की शादी हो गई। शंकर दयाल बीवी के होते शादी कर नहीं सकते थे। तलाक दे नहीं सकते थे, तो वे चुप-चाप शंकरदयाल से मुहम्मद हुसैन हो गए पर वे अपने मुहम्मद हुसैन होने का इलाज नहीं कर सकते थे,

---

1. राही मासूम रजा - ओस की बूँद, पृ. 114

क्योंकि उन्हें डर था कि यह बात उनके पाठकों में कमी कर देगी। इसलिए वे शंकरदयाल ही बने रहे और उनकी पत्नी रुकय्या उनके साथ उनकी रखैल बनकर रहने लगी। फ्लैट के दरवाजे पर दो तख्तियाँ लगी। एक उनके नाम की। एक रुकय्या के नाम की।''[1]

राही जी ने 'कटरा बी आर्जु' में भी फिर एक बार इस समस्या को पाठकों के सामने रखा है। भारतीय समाज में अंतर्जातीय विवाह के परिणाम संतोषजनक नहीं हो सकते क्योंकि अब भी भारतीय समाज में रुढ़िवादिता की ही प्रधानता है तथा विवाह के संबंध में उदात्तीकरण नहीं आ पाया है कि धर्म और सम्प्रदाय के बंधनों से ऊपर उठकर सभी स्त्री-पुरुष एक ही मानव जाति के सदस्य होने का दृष्टिकोण अपना सकें उनके बीच प्रेम एवं विवाह सफल तथा सुखमय जीवन में परिणित हो सके। राही अपनी इसी धारणा का पुष्टीकरण 'कटरा बी आर्जू' के भोलानाथ पहलवान के जीवन का उदाहरण देकर करते हैं।

आशाराम भोलानाथ पहलवान के कुँवारे रह जाने के बारे में अपनी डायरी में लिखता है ''कटरा मीर बुलाकी में कोई खुल के तो यह नहीं कहा पर कई लोगों ने इशारे इशारे में यह अवश्य कहा कि पहलवान अपने गुरु उस्ताद अब्दुल करीम खाँ की बेटी इसमत बीबी पर आशिक हो गए थे। जाहिर है कि इसमत बीवी से उनकी शादी नहीं हो सकती थी, इसलिए इसमत बीवी तो कुछ खाकर मर गई और पहलवान ने कसम खा ली कि वह जिंदगीभर विवाह ही नहीं करेंगे।''[2]

उपर्युक्त अवतरण से राही जी अपनी इस धारणा को स्पष्ट करते हैं कि भारतीय वातावरण में जो जातिपंति के बंधनों को तोड़ने का प्रयत्न करता है, उसका परिणाम अच्छा नहीं होता।

3.12 भाषा समस्या (उर्दू-हिंदी समस्या) -

भारत में भाषा-समस्या मूलरूप में जातीय समस्या का ही एक अंग है। भारत में अनेक भाषाएँ बोलनेवाली जातियाँ रहती हैं। इनसे मिलकर संपूर्ण भारत राष्ट्र बना है। इस राष्ट्र में जातियों की संपर्क-भाषा कौन-सी हो, एक ही संपर्क भाषा हो या अनेक हो यह इस समस्या का

---

1. राही मासूम रजा - दिल एक सादा कागज, पृ. 189
2. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 29

एक पक्ष है। भारत की जातियों में हिंदी भाषी जाति संख्या की दृष्टि से सबसे बड़ी है। हिंदी भाषीयों के विशाल क्षेत्र में अवधी, ब्रज आदि अनेक बोलियाँ बोली जाती हैं। इसलिए हिंदी क्षेत्र में भाषा और बोलियों की एक समस्या बन गई है, जो भाषा समस्या का दूसरा पक्ष है।

बोलचाल की भाषा के आधार पर साहित्यिक भाषा के दो रूप - हिंदी और उर्दू विकसित हुए हैं। उर्दू मुसलमानों की भाषा है या हिंदुओं और मुसलमानों के मिलने से बनी ? क्या हिंदी का विकास हिंदू राष्ट्रवाद के अभ्युत्थान के कारण हुआ ? उर्दू को क्षेत्रीय भाषा बनाया जाय या नहीं ? यह सभी प्रश्न हिंदी भाषी जाति के सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के साथ जुड़े हुए हैं। भाषा-समस्या का यह तीसरा पक्ष है।

गांधीजी ने राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन में यह बात स्पष्ट कर दी थी कि अंग्रेजों ने जनता को गुलाम बनाने के साथ उनकी भाषाओं का दमन किया और उन पर अंग्रेजी लाद दी। गांधीजी के अनुसार अंग्रेजी का प्रचलन राजनैतिक, सांस्कृतिक पराधीनता का अंग ही था। उसे संपर्क-भाषा के पद से हटाना राजनैतिक, सांस्कृतिक स्वाधीनता के लिए आवश्यक था। अंग्रेजी की जगह भारतीय भाषाओं का व्यवहार राष्ट्रीय आत्मसम्मान की रक्षा का प्रश्न था। गांधीजी की भाषा नीति का एक प्रमुख सूत्र यह है कि हिंदी उर्दू बुनियादी तौर से एक ही भाषा है और आगे चलकर उनका एक ही सम्मिलित साहित्यिक रूप होगा। उन्होंने बताया है कि "देश में हिंदू-मुस्लिम समस्या अंग्रेजों के हाथ में बहुत बड़ा हथियार थी जिसे वे राष्ट्रीय आंदोलन को तोड़ने के लिए इस्तेमाल करते थे। उर्दू का संबंध मुसलमानों के विशेषाधिकारों से जुड़ गया। उर्दू की रक्षा का प्रश्न विशेष रूप से उसकी लिपि की रक्षा का प्रश्न धार्मिक अल्पसंख्यकों की रक्षा का प्रश्न बन गया।"[1] गांधीजी ने हिंदी-हिंदुस्तानी का नारा देकर हिंदू-मुस्लिमों को मिलाने का प्रयत्न किया है।

हिंदी के अनेक उपन्यासकारों ने अपनी कृतियों में इस हिंदी उर्दू समस्या की ओर संकेत किया है। प्रेमचंद ने इस अवैज्ञानिक सिद्धांत का खंड़न किया है कि भाषा का आधार धर्म है और इसलिए हिंदुओं की भाषा हिंदी है और मुसलमानों की भाषा उर्दू है।

राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' में यह दिखाया है कि भारत के कोने-कोने में हिंदी उर्दू समस्या का प्रभाव दिखाई देता है। गाजीपुर के एक छोटे से गाँव गंगौली के शीआ मुसलमान

---

1. डा. रामविलास शर्मा - भारत की भाषा समस्या, पृ. 339

मुहर्रम की मजलिसों में पढ़ी-जानेवाली कविताएँ जब उर्दू लिपि में न लिखकर देवनागरी में लिखी जाती हैं, तो पढ़ते समय उनका प्रभाव उल्टा पड़ा है। लोगों के मन में इमाम हुसैन की मृत्यु पर स्वाभाविक दुःख की भावना ही जागृत नहीं होती। लेखक कहते हैं कि "नौहा वही था, लफ्ज वही थे, लहजा वही था। बस एक लिपि की अजनबीयत ने बीवियों को चिढ़ा दिया था। चुनांचे न किसी की आँख नम हुई और न किसी ने बैन किया।"[1] उत्तर प्रदेश में पाई जानेवाली खड़ीबोली और अन्य बोलियों की समस्या पर निम्नलिखित प्रसंग के माध्यम से प्रकाश डाला है।

"इस खड़ी बोली की वजह से हम्माद मियाँ दिन-ब-दिन उत्तरपट्टी और दक्खिन पट्टी के लोगों से दूर होते जा रहे थे। लोगों का कहना था कि भाई कहीं बाहर जाओ तो उर्दू, अंग्रेजी फारसी बोलो। अपने घर में बाप-दादा की जवान (भोजपुरी) बिगाड़ने में क्या फायदा। ....उनकी लड़कियाँ यूँ तो घर आँगन की जबान बोलती लेकिन जैसे ही हम्माद मियाँ दाखिल होते वे तड़ातड़ उर्दू बोलने लगती। उन्हें यह खड़ी बोली जबान निहायत ही बद आवाज और मगरूर मालूम होती है। वे इस जबान में दिल की बात बताने से डरती थी।"[2] इस प्रकार राही जी कहते हैं कि गंगौली के असंख्य परिवारवालों को भाषा एवं बोली की समस्या का सामना करना पड़ा है।

राही जी ने 'आधा गाँव' में भाषा समस्या, खासकर खड़ी बोली एवं भोजपुरी की समस्याओं की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है। भारत में भाषा-समस्या का प्रमुख अंग उर्दू-हिंदी समस्या है। विशेषकर पाकिस्तान के निर्माण के पश्चात् एक भयंकर रूप धारण करके हिंदू और मुसलमान, दो महान संप्रदायों के बीच तनाव का कारण बनी। राही जी इस समस्या को अपने एक उदात्त दृष्टिकोण द्वारा स्पष्ट करते हैं। लेखक अनेक उदाहरणों द्वारा इस तथ्य का स्पष्टिकरण करते हैं कि वास्तव में यह समस्या है ही नहीं, जो हिंदु मुसलमानों के बीच वैमनस्य का कारण बने। राही जी 'हिम्मत जौनपुरी' इस उपन्यास में कहते हैं कि उर्दू और हिंदी एक ही भाषा हिंदी के दो नाम हैं। परंतु आप खुद देख लीजिए कि नाम बदल जाने से कैसे-कैसे घपले हो रहे हैं। नाम कृष्ण हो तो उसे अवतार कहते हैं और मुहम्मद हो तो पैगंबर। नामों के चक्कर में लोग पड़कर यह भूल गए कि दोनों ही दूध देनेवाले जानवर चराया करते थे। दोनों ही पशुपति गोबरधन और

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 314
2. वही, पृ. 221-222

ब्रजकुमार थे।''[1] इससे राही जी यह स्पष्ट कर देते हैं कि दोनों की आत्मा में कोई अंतर नहीं है। दोष केवल इन्हें परखनेवाली दृष्टि का ही है। पाकिस्तान के निर्माण के पश्चात् भारत में इस उर्दू हिंदी की समस्या को लेकर अनेक झगड़े हुए।

राही जी इस समस्या की आर्थिक दृष्टि से चर्चा करते हुए कहते हैं कि भारत में आज यह समस्या उर्दू या हिंदू-मुसलमान की नहीं है, समस्या केवल नौकरी की है। यह धारणा वे इफ्फन और टोपी के बीच होनेवाली चर्चा से स्पष्ट करते हैं। एक बार जब इफ्फन टोपी शुक्ला के हिंदी उच्चारण पर आक्षेप कर रहा था तब टोपी ने कहा, ''तुम उर्दूवाले जलते हो हिंदी से।''

''जलते नहीं, डरते हैं।'' इफ्फन ने कहा।

''डर! क्या उस डर से छूटकारा पाने की कोई सूरत नहीं? मैं ही हिंदी हूँ मैं ही उर्दू हूँ। तो क्या मैं अपने आप से भी डरने लगा हूँ? मेरा एकरूप एक लिपि नही जानना। इसलिए वह दूसरी लिपि से डरता है। भाषा की लड़ाई दरअसल नफे नुकसान की लड़ाई है। सवाल भाषा का नहीं है। सवाल है नौकरी का। जो एक लिपि जानता है वह महफूज है, जो एक लिपि नहीं जानता वह डरा हुआ है। मेरे दोनों रूप भाषा जानते हैं। परंतु रोशनाई की लकीर ने हमें बाँट रखा है।''[2]

लेखक इससे यह स्पष्ट कर देते हैं कि उर्दू-हिंदी समस्या के मूल में आर्थिक कारण ही छिपे हुए हैं। उर्दू में कोई ऐसी वस्तु निहित नहीं है जिसकी वजह से उसका विरोध किया जाय।

लिपि की स्थिति स्पष्ट करते हुए राही लिखते हैं कि ''भाषा और लिपि का संबंध कोई अटूट संबंध नहीं होता। लिपि तो भाषा का वस्त्र है। उसका बदन नहीं है, आत्मा की बात तो दूर रही। मातृभाषा की तरह कोई मातृलिपि नहीं होती; क्योंकि लिपि सीखनी पड़ती है और मातृभाषा सीखनी नहीं पड़ती। ....बच्चे को जैसे दूध पीना आता है। उसी तरह मातृभाषा भी आती है। परंतु लिपि एक बाहरी चीज है। शब्द वही रहता है, शब्द का अर्थ भी वही रहता है, चाहे उसे जिस लिपि में लिया जाय। कैसे मूर्ख हैं ये लोग जो लिपि की भाषा को बड़ा मानते हैं।''[3]

भाषा समस्या का दूसरा पक्ष यह है कि उर्दू जाननेवालों के लिए देवनागरी लिपि का जानना अनिवार्य ठहराना भी ठीक नहीं है। राही जी 'ओस की बूँद' में वजीर हसन् के द्वारा अपनी

---

1. राही मासूम रजा - हिम्मत जौनपुरी, पृ. 33
2. वही, पृ. 168
3. राही मासूम रजा - ओस की बूँद, पृ. 30

इसी धारणा को व्यक्त करते हैं। जब वजीर हसन् अपनी पुत्री शहला से कहते हैं कि वे उसकी लिखि हुई हिंदी नहीं पढ़ सकते तब वह कहती है- ''हम आपको हिंदी पढ़ाएँगे।' यह सुनकर वजीर हसन् कहते हैं, ''पढ़े में त कउनों हरज ना है, बाकी हम ई सोच रहे कि, हम अपनी जबान पढ़ के काहे न जी सकते अपने मुलुक में ?''[1]

राही जी इससे यह स्पष्ट करते हैं कि प्रत्येक भारतवासी को अपनी भाषा को अपनी इच्छानुसार लिपि में सीखकर स्वतंत्रतापूर्वक एवं सुखपूर्वक जीवन बिताने का अधिकार है। कोई भी व्यक्ति किसी को विशिष्ट लिपि के सीखने के लिए मजबूर नहीं करता।

3.13 यौन जिजीविषा की समस्या -

मानव की यौन-जिजीविषा की अभिव्यक्ति हिंदी साहित्य में, मुख्यतः उपन्यास में उसके शैशव काल से होती आ रही है। ''विशेषकर साठोत्तर उपन्यासों में यह वैविध्य, परिणाम, आंतरिकता तथा विस्फोटात्मकता के स्तर पर स्वयं की एक पृथक सत्ता ही स्थापित कर चुकी है।''[2] हिंदी साहित्य में आरंभिक युग के उपन्यासों पर स्वच्छंदतावाद, पूँजीवाद और सामंतवाद का प्रभाव था। प्रेमचंद युग में यौन जिजीविषा गुलाम मनोवृत्ति एवं नौकरशाही की छाया में पलती रही है अनमेल विवाह, विधवा विवाह, वेश्या समस्या आदि ने यौनाचार के आयाम उद्घाटित किए प्रेमचंदोत्तर युग में उपन्यासों में ज्यादातर कामकुंठा में बदलता चला गया।

हिंदी उपन्यासों में सन् साठ तक आते सर्वथा नए प्रयोगों के युग को जन्म दिया यह प्रयोग जीवन की वास्तविकता से जन्मे हैं। छठे और सातवें दशक के उपन्यास निम्न मध्यवर्गीय तथा उच्च वर्गीय युवा पीढ़ी के यौनाचार पर ही आधारित हैं।

यौन जिजीविषा प्रमुख वैयक्तिक समस्या के रूप में तभी समाज के सामने प्रकट होती है जब देश का प्रशासन, समाज और धर्म प्रत्येक मानव को अपना जीवन साथी चुनने की तथा मूलभूत सहज जिजीविषा की सुविधा प्रदान नहीं करता। प्रतिबंधों और अवरोधों से भरे समाज में यौन विकृतियों का होना स्वाभाविक ही है।

---

1. राही मासूम रजा - ओस की बूँद, पृ. 30
2. डॉ. रवींद्रकुमार जैन - 60 के बाद के हिंदी उपन्यास : यौन जिजीविषा, पृ. 63 (अनुवादक शोध पत्रिका, संपादक डॉ. बच्चन देवकुमार)

राही मासूम रजा ने अपने उपन्यास 'दिल एक सादा कागज' में इस समस्या का विस्तार से विश्लेषण किया है। चंचल का वर्णन करते हुए वे कहते हैं कि ''चंचल बेचारे की ट्रेजिडी यह थी कि वह केवल जवानी इश्क कर सकता था। उसका बचपन बाथरूमों में गुजरा था और अब भी बाथरूमों में गुजर रहा था।''[1]

एक और पात्र के बारे में लिखा है कि ''तिरछे खाँ तो बाथरूम लवर हैं। कहते हैं कि, आदमी को अपना काम अपने हाथों से करना चाहिए। नहीं तो अल्लाह मियाँ ने हाथ दिए क्यों हैं ?''[2]

जैदी विला के बावर्ची अब्दुस्समद एवं नौकर शर्फुआ के बीच समानैत्रिक यौनाचार के घृणित व्यवहार का वर्णन पाया जाता है। कुछ समय बाद शर्फुआ बावर्ची को छोड़कर मौलवी साहब से संपर्क स्थापित कर लेता है तो वह देखकर बावर्ची बहुत क्रोधित होता है। उसकी इस दशा का वर्णन करते हुए राही जी कहते हैं कि ''जब अब्दुसमद ने यह देखा कि शर्फुआ दोपहर में मौलवी साहब की टाँगे दबाने चला जाता है और मौलवी साहब के कमरे के किवाड़ अंदर से बंद हो जाते हैं तो उनके हाथों के तोते उड़ गए। अपनी खाली दोपहरों में उन्हें ऐसा लगा कि जैसे पत्थर के दहकते हुए कोयले चूल्हे से निकालकर उनके दिल में आ गए हैं।''[3] इस प्रकार राही जी ने उदाहरणों के द्वारा इस भयंकर वैयक्तिक समस्या का तथ्यात्मक चित्र प्रस्तुत किया है। राही जी ने यह स्पष्ट किया है कि इस समस्या का प्रमुख कारण मनोवैज्ञानिक है। परंतु मुख्य रूप से समाज ही इसके लिए उत्तरदायी है, जो मनुष्य को मुक्त रूप से अपनी सहज मूलभूत इच्छा की पूर्ति के साधन प्रदान नहीं करता।

राही जी ने 'दिल एक सादा कागज' उपन्यास में पुरुष में पायी जानेवाली अप्राकृतिक यौन जिजीविषा की वैयक्तिक समस्या का चित्रण किया है। लेकिन 'सीन-75' तथा 'कटरा बी आर्जु' में उन्होंने स्त्रियों में पाई जानेवाली अप्राकृतिक यौन जिजीविषा की वैयक्तिक समस्या का चित्रण किया है।

---

1. राही मासूम रजा - दिल एक सादा कागज, पृ. 86
2. वही, पृ. 90
3. वही, पृ. 22

स्त्रियों में भी यह समस्या मुख्य रूप से मनोवैज्ञानिक है। इसके कारण कभी-कभी भयंकर परिणाम भी हो जाते हैं। उसी का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए राही जी कहते हैं कि "जब सरला सोफिया कॉलेज में पढ़ रही थी तब एक टीचर मिस डिक्रूज उससे प्रेम करने लगी थी। मिस डिक्रूज साहित्य पढ़ाया करती थी। क्लास का काम न करो तो गालों में अजब तरह से चुटकी लिया करती थी। खुश होती तो लिपटकर अजीब तरह से प्यार कर लिया करती थी। ....फिर उसने देखा कि सूखी सड़ी-सी मिस रूकैया दिलगीर ख्वाह-म-ख्वाह उससे जलने लगी। सरला के आने से पहले मिस डिक्रूज और मिस दिलगीर में बहुत गाढ़ी छना करती थी। ....फिर सरला आ गई और उसी दिन मिस दिलगीर अकेली रह गई और उनकी आँखों का फ्यूज उड़ गया।

एक रात सरला रीडिंग रूम से आयी तो उसने क्या देखा कि मिस दिलगीर उसके बिस्तर पर गहरी नींद सो रही है। वह हैरान हुई। मेज पर एक खत था। सरला ने खत पढ़ा। वह खत उसी के नाम का था -

सरला, तुमने लिज को मुझसे छीनकर अच्छा नहीं किया। तुमने मेरी जिंदगी छीनी है तो मैं कहीं और क्यों मरने जाऊँ ? अब लिज जब तुम्हें अपनी बाँहों में लेगी या तुम्हारा मुँह चुमेगी या तुम्हारे ब्लाऊज में हाथ डालेगी यह.... सोचने ही से मेरा दम घुट रहा है। खुदा तुम्हें गारत करे सरला.... जब तुम अकेले में लिज के प्यार का जवाब अपने कच्चे बदन के प्यार से दे रही होगी तब तुम्हें दिखाई दूँगी, तुम्हारे अपने बिस्तर पर लिज और तुम्हारे बीच में, मरी हुई....।"[1]

राही जी ने इसके चित्रण द्वारा यह स्पष्ट कर दिया है कि अप्राकृतिक यौन जिजीविषा की समस्या स्त्रियों में कितना गंभीर रूप धारण कर सकती है।

राही जी अपनी रचना 'कटारा बी आर्जू' में इसी प्रकार का एक और उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। जेल में पायी जानेवाली बंदी का वर्णन करते हुए राही कहते हैं कि "भागवती पढ़ी-लिखी थी। दिल्ली युनिवर्सिटी में अंग्रेजी साहित्य पढ़ाया करती थी। ....अपनी तनहाई के अंधे कुएँ में कैद थी। उसे जिस लड़की से प्यार था उसकी शादी हो गई और उसने उस लड़की को कत्ल कर दिया। अदालत में उसे पागल साबित न किया जा सका। उम्र कैद की सजा हुई वह उम्र कैद की सजा काट रही थी। जब कोई नई कैदी आती तो वह दीवानी हो जाती और इसमें बला की ताकत आ

---

1. राही मासूम रजा, सीन-75, पृ. 28

जाती और यह उस नई कैदी को दूसरी तमाम कैदी औरतों के सामने रेप करती और बिलकुल सीधी हो जाती।''[1] इस प्रकार राही जी ने अनेक समस्याओं का चित्रण करके इस समस्या की ओर इशारा किया है कि वर्तमान समाज में यह एक गंभीर समस्या है।

3.14 अंधविश्वास की समस्या -

जिन कार्यों को भाग्य, अवसर, जंत्र-मंत्र, टोने-टोटके पर रखकर किया जाता है, वे सब अंधविश्वास की सीमा में आते हैं। भाग्यवादिता द्वारा पोषण पाकर अंधविश्वास की तानाशाही खूब चलती है तथा प्रगतिशील तथा वैज्ञानिक प्रकाश से आलोकित देशों में इन अंधविश्वासों की मात्रा कम होती है। भारत में अंधविश्वास के कारण सब कुछ भाग्य पर छोड़ दते हैं।

आधुनिक हिंदी उपन्यास साहित्य में भारतीय समाज में प्रचलित अंधविश्वासों के कारण होनेवाली हानियों का विषद चित्रण पाया जाता है। प्रेमचंद अपने उपन्यास 'प्रेमाश्रम' में श्रद्धा के संबंध में लिखते हैं- ''वह अपने प्राणों से, अपने प्राण प्रिय स्वामी से हाथ धो सकती थी, परंतु अपने धर्म की अवज्ञा करना उसके लिए असंभव था।''[2] ज्ञानशंकर श्रद्धा की इसी धर्म भीरू प्रवृत्ति का लाभ उठाकर उसकी धर्म भावना को उत्तेजित कर देता है और इस प्रकार उसके द्वारा अपने भाई प्रेमशंकर का बहिष्कार करवाता है। श्रद्धा अपनी धर्मभीरू प्रवृत्ति के कारण ही पति का स्वीकार नहीं कर सकती। ''जिस पति के वियोग में उसने सात वर्ष रोकर व्यतीत किए थे उसे वह केवल इस मिथ्या विश्वास के कारण त्याग देती है कि समुद्र पार करने से हिंदुत्व का नाश हो जाता है।''[3]

राही जी ने अपने उपन्यास 'ओस की बूँद' में दो पात्रों के चरित्र-चित्रण द्वारा अंधविश्वासों तथा उसके कारण समाज में होनेवाली हानियों का वर्णन किया है। वजीर हसन् की पत्नी हाजरा अपने पुत्र के वियोग में विक्षिप्त हो जाती है और बहकी-बहकी बातें करने लगती है। परंतु लोगों में यह बात फैली कि हाजरा पर जिनों का बादशाह आ गया है। हमदर्दी के बहाने औरतें तमाशा देखने आने लगी और मौका मिलते ही दिल की बातें पूछने लगी।

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 212
2. प्रेमचंद - प्रेमाश्रम, पृ. 123
3. डॉ. रक्षापुरी - प्रेमचंद साहित्य में व्यक्खित और समाज, पृ. 215

'मोरा कल्लन पाकिस्तान से अय्यहे कि ना ?'

'दुलहिन की गोदी कब भरिहे ?'

'ऊ मूई रंडियवा से मसेन के अब्बा का पिण्ड छूटि हैं कि नाहीं ?'

'मैं जवान जहान बेटी को कब तक अगोरों आखिर। अल्लाह मियाँ एको जोड़ी। लिक्खिन कि नाही।''[1]

इस प्रकार के सवाल करने के पीछे लोगों का ही अंधविश्वास है कि जिन आदि कुछ पारलौकिक शक्तियाँ हैं तथा जो लोग इन शक्तियों के प्रभाव में आ जाते हैं वे उन शक्तियों की सहायता से सामान्यतः असंभव कार्यों को संभव कर सकते हैं। इसीलिए लोग हाजरा से ऐसे कार्य करवाने की प्रार्थना करते हैं जो साधारणतया उनके लिए कष्ट साध्य है। राही जी 'ओस की बूँद' के दूसरे पात्र 'बेहाल शाह' के उदाहरण द्वारा यह बतलाते हैं कि दुष्ट लोग किस प्रकार लोगों के अधविश्वासों का लाभ उठाते हैं। अलौकिक शक्तियों को अपने वश में रखने का ढोंग करके ये लोग भोलीभाली जनता को धोखे से लूटते हैं।

लोगों का यह विश्वास है कि महान धार्मिक संतों की समाधियों पर जाकर जो भी कामना की जाती है उनकी मन की इच्छा पूरी होती है। कुछ लोग साधारण लोगों की कब्र पर भी एक भव्य समाधि बनाकर बैठ जाते हैं और लोगों का मनोरथ पूरा करने के बहाने उनसे धन लूटते हैं। इसी प्रकार की एक योजना बेहाल शाह के मन में आती है। बेहाल शाह को एक मजार की सख्त जरूरत थी। वह समाचार पत्रों में यह इश्तवर तो दे नहीं सकते थे कि जरूरत है एक मजार की। शहर में जितने कायदे के मजार थे, वे अब उठे हुए थे कि एक सुबह को कंवर वजीर हसन् के मरने की खबर मिली और बेहाल शाह को मजार मिल गया।

वजीर हसन् के चारों तरफ एक मित्र का जाल बुना जाने लगा। पहले तो शाह साहब ने एक ख्वाब देखा कि ''एक आदमी मुँह पर हरा नकाब डाले सफेद घोड़ा उड़ाता आया और उपटकर बोला : यहाँ-कहाँ बैठा है। वजीर हसन् के मजार पर जा। वह ख्वाब देखकर उसकी आँख खुल गई वह पसीने से तरबतर थे और उनकी कोठरी जूही के महक से ठसाठस भरी हुई थी। जब उन्होंने ताबड़तोब तीन रात बराबर वही ख्वाब देखा तो उसने वजीर हसन् के घर जाकर कहा हम

---

1. राही मासूम रजा - ओस की बूँद, पृ. 39

तीन रात से बराबर बुजुरगान का जूता खा रहे हैं कि हियाँ का बैठा है। जा वजीर हसन् के मजार पर। बुजुर्गों का नाम सुनकर सुन लेने के बाद इन्कार की गुँजाइश नहीं थी। चुनाँचे बेहालशाह उसी दिन मजार पर जा बैठे।''[1]

इस बेहाल शाह ने बलवे के समय अवसर से लाभ उठाकर उसी वजीर हसन् की पुत्री शहला को अपने घर में शरण देने का बहाना बनाकर उसके साथ बलात्कार किया था। इससे राही जी स्पष्ट करते हैं कि अंध विश्वास की समस्या कितनी गंभीर है।

3.15 पारिवारिक समस्या -

बीसवीं शती का पूर्वाध भारत के लिए संक्रांति का काल रहा है। नारी शिक्षा, नारी जागरण, समानता की माँग और अधिकारें के प्रति सतर्कता, राष्ट्रीय और सामाजिक कार्य के लिए निमित्त स्त्री पुरुषों का परस्पर मिलना आदि कारणों से यह समस्या पैदा हुई। यह समस्या साहित्यकारों के लिए चुनौती का विषय बन गई है। हमारी सामाजिक और साहित्यिक परंपराओं की विशेषता रही है कि नारी के पर-पुरुष के प्रति आकर्षण का चित्रण करते समय उपन्यासकार प्रायः ऐसी नारी को तभी सहानुभूति प्रदान करते हैं, जब उसका पति विकृत हो या दृष्ट हो।

राही मासूम रजा ने अपने उपन्यास 'दिल एक सादा कागज' में बंबई के विशिष्ट समाज का वास्तविक चित्र प्रस्तुत किया है। बंबई फिल्म उद्योग के लिए तो बंबई सारे भारत का केंद्र है। भारत के कोने-कोने से युवक और युवतियाँ अभिनेता एवं अभिनेत्रियाँ बनने बंबई पहुँचकर अपना जीवन बरबाद कर बैठते हैं।

फिल्मी जगत में प्रसिद्ध अभिनेताओं से प्रेम करना एवं अवैध संबंध स्थापित करना बुरा नहीं समझा जाता है। प्रस्तुत समस्या का चित्रण लेखक पुष्पा और मिसेज चावला के द्वारा प्रस्तुत करते हैं। राही जी कहते हैं कि पुष्पा के पिता की फिल्म बनाने की योजना तो असफल हो गई। ''पुष्पा अपने को हिरोइन समझने लगी। चूल्हे चक्की के चक्कर में पड़ने के बाद भी वह अपने खयालों में हिरोइन बनी रही। घंटों आइने के सामने बैठकर डाइलाग बोलती, ऐक्टिंग

---

1. राही मासूम रजा - ओस की बूँद, पृ. 66

करती, कभी विलेन से टकराती और कभी हीरो से लव-सीन करती, रोती, मुस्कुराती और कनखियों से अपने हिरो की तरफ देखती।''[1]

पुष्पा के पड़ोस में एक फिल्मी हीरो शहजदा काश्मीरी आने जाने लगा, तो उसने उसके साथ अवैध संबंध स्थापित कर लिया। पास में ही रहनेवाली मिसेज चावला ने भी इसी प्रकार का संबंध स्थापित कर लिया। जैसे- ''मिसेज चावला ने चावला को नोटिस लेना एक दम छोड़ दिया। वह दिन भर शहजादा के नशे में रहती और शाम को उसकी बाँहों में।''[2] उसके इस व्यवहार का उसके पति पर जो प्रभाव पड़ा उसका चित्रण इस तरह मिलता है- ''जाहिर है कि चावला साहब को भांपने में बहुत देर नहीं लगी, वह भांप गए और भांपते ही उन्हें 'रफ्फन' और जन्नत से शिकायत हो गई। चुनाचे इण्डस्ट्री में यह बात फैली कि बागी और जन्नत शहजादा काशमीरी के दलाल हैं.... लोगों ने तो जन्नत के तीन चार बच्चे भी गिरवा दिए जो उसे फिल्म मास्टरों से चंदे में मिले थे।''[3]

इससे राही जी ने स्पष्ट कर दिया है कि फिल्मी समाज अधोगति की किस सीमा पर है जहाँ पति अपनी पत्नी के परपुरुष से संपर्क को प्रत्यक्ष रूप से रोकने में असमर्थ है। वह केवल दूसरों पर आरोप लगाकर स्वयं संतुष्ट हो जाती है। इस प्रकार राही जी ने अनेक उदाहरणों द्वारा एक विशिष्ठ सामाजिक वर्ग में स्थित समस्या का चित्रण अत्यंत मार्मिक ढंग से किया है।

फिल्मी संसार से संबद्ध विवाहित स्त्रियों का, अन्य पुरुषों से खासकर अभिनेताओं से संपर्क स्थापित करना सर्वसाधारण बात हो गई है। अपनी इसी धारणा की पुष्टि उन्होंने अपने उपन्यास 'सीन-75' में की है।

फिल्मों के लिए कहानियाँ लिखनेवाले फंदाजी की पत्नी राधिका का चित्रण देखिए- ''एक रात राधिका एक पार्टी से लौटी तो उसके बदन के तार खिंचे हुए थे। धमेंद्र ने उसके कंधोपर हाथ रखकर, उसकी आँखों में झाँकते हुए कहा था, ''भाबीजी, तुम भी कोई चीज हो....' उसके दिमाग में रास्तेभर यही बात गूँजती रही। उसने हजार बार दिल-ही-दिल में धमेंद्र से पूछा, 'क्या

---

1. राही मासूम रजा - दिल एक सादा कागज, पृ. 88
2. वही, पृ. 88
3. वही, पृ. 88

चीज है ?' और उस सवाल पर धमेंद्र हँस-हँसकर उसकी तरफ थोड़ा-सा और सरक आया। यहाँ तक कि बिलकुल उसके ऊपर आ गया और उसकी साँस घुटने लगी। उसके पंजेकार की सीट की मखमल में गढ़ गए.... उसे पता भी न चला कि कार कब रूकी और बूढ़े ड्राइवर ने कब कार का दरवाजा खोला।''[1]

धमेंद्र के नशे में जब वह अपने घर में घुसती है तो उसका नौकर रामनाथ भी उसको बहुत सुंदर दिखाई देने लगता है। अतः वह उसको अपनी ओर आकृष्ट करती है। वह नौकर से कहती है- '' 'आज पिंड़लियों में बड़ा दर्द है। जरा दबा दो।' और यह कहते-कहते वह पलंग पर जरा परे सरक गई और पलंग पर उसके लिए जगह बन गई और रामनाथ उसके कान के पास मुँह लाकर कानपुर की गालियाँ बकने लगा।''[2]

कुछ समय बाद उसकी पुत्री अपने नौकर एवं प्रेमी रामनाथ को खोजती हुई माँ के कमरे की ओर गई। उसने देखा कि ''माँ का बेडरूम बंद था। वह दबे पाऊँ माँ के बेडरूम की तरफ गई। उसने की होल से झाँका। पलंग दिखाई न दिया, पर माँ के हँसने की आवाज आयी। वह यह आवाज पहचान गई। यह तो जैसे खुद उसकी हँसी की आवाज थी। वह हँसी, जो रामनाथ से ब्लाऊज का बटन खुलवाने में आती है। वह सन्नाटे में आ गई क्योंकि अब रामनाथ उसका प्रेमी भी था और उसका सौतेला बाप भी। राधिका उसकी माँ भी थी और उसकी रकीब भी।''[3]

इसी बीच फंदाजी आ जाते हैं परंतु वे भी स्थिति को समझ जाते हैं तथा बिना पूछताछ किए रामनाथ को अपने कमरे से लौटने देते हैं। रामनाथ जब अपने बिस्तर पर पहुँचता है तो वहाँ पुष्पलता को लेटी हुई पाता है। रामनाथ घबराकर उससे कहता है-

''और जो साहब या बाई आ गए ?''

''तो क्या हो गया ?'' पुष्पलता ने सवाल किया।

''देख लेंगे तो क्या कहेंगे ?''

---

1. राही मासूम रजा - सीन-75, पृ. 47
2. वही, पृ. 49
3. वही, पृ. 49

"बाथरूम में देखकर क्या किया था उन्होंने ?" पुष्पलता ने पूछा। रामनाथ के पास इस सवाल का जवाब नहीं था। .....इसलिए वह पुष्पलता के साथ लेट गया और कानपुर की गालियाँ याद करने लगा।"[1]

इस उदाहरण से लेखक यह बतलाना चाहते हैं कि स्त्रियाँ अन्य पुरुषों के साथ अवैध संबंध स्थापित करती हैं, तो उनके इस व्यवहार का बुरा असर उनकी संतान पर पड़ता है। बाद में संतान वश के बाहर होती है और उसे ठीक रास्ते पर लाने में स्त्रियाँ असमर्थ हो जाती हैं। प्रस्तुत समस्या राही जी के दो उपन्यासों में पाई जाती हैं। जिसका चित्रण उन्होंने पर्याप्त मात्रा में किया हुआ दृष्टिगोचर होता है।

3.16 जमींदारों के शोषण की समस्या -

श्री. वृंदावन लाल वर्मा ने 'अमरबेल' में लिखा है कि "अधिकांश जमींदारों का इतिहास जबर्दस्ती लूटमार और साहूकारी दाव-पेचों से बना है।"[2] 'प्रेमाश्रम' में प्रेमचंद ने किसान जीवन का विस्तृत चित्रण किया है और जमींदारी वर्ग का भी व्यापक चित्र प्रस्तुत किया है। 'प्रेमाश्रम' में ज्ञान शंकर के शोषण का विस्तृत चित्रण प्रस्तुत किया गया है। "जमींदारी-प्रथा के मिटने पर जमींदारों के आर्थिक साधन पूर्ववत् न रहे, तथापि प्राचीन जीवन के प्रति उनका मोह बना हुआ था। इस मोह के कारण अपनी शान-शौकत को पूर्ववत् बनाए रखने का उनमें आग्रह विद्यमान था जो नवीन आर्थिक संदर्भ में उपहासात्मक लगता था।"[3] हिंदी साहित्य की अनेक विधाओं में जमींदार वर्ग के शोषण का बहुरंगी चित्रण पाया जाता है।

राही जी के 'आधा गाँव' के लगभग सभी पात्र मुसलमान जमींदार हैं। इन पात्रों के स्वभाव की चर्चा करते हुए राही जी ने लिखा है कि "तमाम छोटे जमींदार गिरोहबंद थे। रात को डाके डलवाते थे और दिन को मुकदमें लड़वाते थे। कभी इसे बेदखल किया कभी उसे दखल दिलवा दिया। इसी हेर-फेर में सौ-पचास खरे हो जाते हैं।"[4] राही ने जमींदारों के कुकर्मी का विस्तार से वर्णन किया है।

---

1. राही मासूम रजा - सीन-75, पृ. 53
2. वृंदावनलाल शर्मा - अमरवेल, पृ. 215
3. डॉ. मान्धाता ओझा - हिंदी समस्या नाटक, पृ. 166
4. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 83

काँग्रेस ने कृषि सुधार समिति का संगठन करके यह प्रस्ताव रखा कि पाँच वर्ष की अवधि में संपूर्ण देश में जमींदारी का उन्मूलन कर दिया जाए। सर्व प्रथम उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन व भूमिसुधार अधिनियम जनवरी सन् 1951 में पास किया गया और जुलाई सन् 1952 को लागू किया गया। "इस कानून के अंतर्गत राज्य ने समस्त भूमि को जो 3715 लाख एकड़ थी काश्जकारों को दे दी। छोटे जमींदारों को पुनर्वास अनुदान दिया गया।"[1] विवेच्य उपन्यासों में जमींदारों के शोषण की समस्या का चित्रण अल्प मात्रा में क्यों न हो किंतु अवश्य मिलता है।

समन्वित मूल्यांकन -

डॉ. राही मासूम रजा ने सांप्रदायिक समस्या का चित्रण करके इस मत को स्पष्ट किया है कि सांप्रदायिक दंगों के मूल में राजनैतिक स्वार्थ ही निहित है। राही जी के अनुसार इस समस्या का मूल कारण हिंदू-मुस्लिमों में पाई जानेवाली भ्रांतियाँ हैं। हिंदू-मुस्लिम एक-दूसरे के शत्रु नही हैं। मुसलमानों की रक्षा करते हुए कई हिंदुओं ने अपने प्राण दिए हैं। भारत अनेकता में एकता स्थापित करने के लिए संसार भर में अद्‌वितीय है। सदियों से यहाँ विभिन्न धर्मों के लोग साथ-साथ रहते चले आ रहे हैं। इस समस्या का समाधान जनता की जागृति में ही निहित है। जनता सांप्रदायिक बलवों के मूल कारणों को समझे और भ्रांतियों का निवारण करे, एक-दूसरे की समस्याओं को समझे।

राही जी ने अनमेल विवाह के परिणामों की विस्तृत चर्चा की है। इस समस्या के कारण अनेक परिवार टूटते हैं, साथ में इस प्रकार के दंपत्ति कभी भी सुखपूर्ण जीवन नहीं बिताते प्रेम-विवाह की समस्या का चित्रण करके राही जी ने भारतीय आदर्श का समर्थन किया है। भारत में विवाह एक धार्मिक संस्था है, जहाँ प्रेम की परिणति विवाह में होना अनिवार्य नहीं माना। विवाह के बाद पति-पत्नी के बीच प्रेम को ही स्वाभाविक तथा आदर्श माना गया है। राही जी ने अंतर्जातीय प्रेम-विवाह के प्रतिकूल परिणामों की ओर संकेत करते हुए यह बतलाया है कि भारतीय वातावरण अब तक उसके लिए अनुकूल नहीं है। भारतीय समाज द्‌वारा अब भी अंतर्जातीय प्रेम-विवाह को स्वीकृति प्राप्त नहीं हुई है।

---

1. द्‌वारिका गोयल - भारतीय सामाजिक समस्याएँ, पृ. 201

अवैध संतान और अवैध मातृत्व की समस्याओं का चित्रण करते हुए, राही जी ने यह स्पष्ट किया है कि इन समस्याओं के लिए उत्तरदायी पुरुष हैं जो अपनी गलतियों के लिए स्त्रियों को दोषी ठहराते और स्वयं बच निकलते हैं। राही जी ने विधवा समस्या का यथार्थ चित्रण करते हुए स्वयं के अनुभव के आधार पर मुसलमान समाज में पाई जानेवाली विधवा समस्या की भयंकरता पाठकों के सामने रखी है।

राही जी ने बंबई महानगर में प्लेट फार्मों पर जीवन बितानेवाली दरिद्र वेश्याओं के जीवन को भी बारीकी से चित्रित किया है और साथ में सहानुभूति भी प्रकट की है। उन्होंने बताया है कि इन वेश्याओं का वेश्यावृत्ति को अपनाने का प्रमुख कारण उनकी दरिद्रता है। इस समस्या का समाधान उनके प्रति आक्रोश अथवा घृणा प्रकट करने में नहीं है तथा सहानुभूति प्रकट करने में भी नहीं है, तो उनकी दरिद्रता कम करने में है। राही जी स्वयं बंबई महानगर में रहते थे, इस कारण इस समस्या का चित्रण स्वाभाविक ढंग से किया है।

आत्महत्या की समस्या का चित्रण करते हुए राही जी ने स्पष्ट किया है कि किसी भी व्यक्ति के लिए आत्महत्या किसी भी समस्या का अंतिम समाधान नहीं है। वही व्यक्ति आत्महत्या कर बैठता है, जो जीवन की परिस्थितियों के साथ समझौता नहीं कर सकता। राही जी यह संदेश देना चाहते हैं कि जीवन की सम-विषम स्थितियों का हार्दिक स्वागत करना चाहिए। आत्महत्या से कोई भी समस्या सुलझती नहीं।

दहेज की समस्या का चित्रण करते हुए राही जी यह बतलाते हैं कि यह समस्या भारतीय हिंदू परिवारों के लिए ही एक विशिष्ट समस्या नहीं है, भारत के सभी लोगों को चाहे हिंदू हो या मुसलमान इस समस्या के कारण भयंकर दुष्परिणामों का सामना करना पड़ता है। राही जी ने जातिवाद की समस्या का चित्रण करते हुए यह बताया है कि भारत में सिर्फ हिंदुओं को ही नहीं तो मुसलमानों को भी इस समस्या का सामना करना पड़ता है। राही जी ने स्वयं मुसलमान जातिवाद का निष्पक्ष भाव से चित्रण किया है, जो उनकी तटस्थता का द्योतक है।

उर्दू-हिंदी समस्या की चर्चा करते हुए राही जी ने यह स्पष्ट किया है कि उर्दू एवं हिंदी की कोई समस्या ही नहीं है, क्योंकि दोनों एकही भाषा के दो विभिन्न रूप हैं, जो दो भिन्न-भिन्न लिपियों तथा शैलियों में लिखे जाते हैं। इसकी वास्तविकता को समझने में ही इस समस्या

का हल निहित है। लेखक ने उर्दू में शिक्षा प्राप्त करने पर भी, स्वयं उच्चकोटि के उर्दू कवि होने पर भी तथा दीर्घकाल तक विश्वविद्यालय में उर्दू के अधिव्याख्याता रहने पर भी उन्होंने उर्दू के प्रति मोह नहिं दिखाया है, उल्टा उर्दू हिंदी समस्या की निष्पक्ष भाव से चर्चा की है। अंधविश्वास की समस्या का चित्रण करके यह समस्या कितनी गंभीर है तथा उसके द्वारा लोगों को कितनी हानि हो रही है यह स्पष्ट किया है। जमींदारों के शोषण की समस्या का चित्रण करते हुए राही जी ने यह स्पष्ट किया है कि यद्यपि जमींदारों की पीढ़ी तो स्वाधीनता के बाद खत्म हो गई है, लेकिन शोषण अब भी चल रहा है। समाज में अब भी शोषक और शोषित दोनों वर्ग वैसे ही सुरक्षित हैं। सिर्फ शोषक वर्ग के नाम बदल रहे हैं।

निष्कर्षतः स्पष्ट है कि राही जी ने अपने उपन्यासों में वर्तमान कालीन विविध समस्याओं का अत्यंत सूक्ष्मता से चित्रण किया है। साथ ही वे कुछ समस्याओं के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से समाधान भी सूचित करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं।